जहँ वह बीरज पयहु सुनीजे । हेम भई तहँ की सब चीजें ॥
ता आगें की चीजें रूपौ । होत भई पुनि लोह-अनूपौ ॥
जहँ वह बीरज कौ मल छायौ । तहँ कथीर औ रांग सुहायौ ॥
या बिधि बहु धरिनी महँ धातें । होत भई तिहि गरभ प्रभा तें ॥
गरभ तेज तहँ परबत जेते । सुबरन होत भये सब तेते ॥
तब तहँ लखि सुर नवलकुमारै । दुगधपानहित कीन्ह बिचारै ॥
छहहु कृत्तिकनि सौं जु उचारे । पय प्यावहु तुम याहि अपारे ॥
या बिधि मुनि देवन की बानी । छहहु कृत्तिकनि निजउर आनी ॥
जो इह सुत कौं सुपय पिवैहै । तो ये हमरे पुत्र कहैहै ॥
यह बिचारि कृतिकनि पयप्यायौ। कार्त्तिकेय यातें सु कहायौ ॥
स्कन्दित भौ हर बीरज यातें । स्कन्द नाम देवन दिय तातें ॥
षटमुख ह्वै षट मातनही कौ । पियह दूध अमृतहु तें नीकौ ॥
यातें षटमुख नाम कहायौ । असुर सँघारि जगत जस छायौ ॥
तब देवन अभिषेक कियौई । सेनापति अधिकार दियौई ॥
या बिधि गंगकथा सुभठानी । त्यौं कुमारउतपत्ति बखानी ॥
जो यह कथहि सुनै जु कहैई । तासु बपुष आरोग रहैई ॥

दोहा ।

सुत सम्पति सम्भोग लहि रहि जगमाहँ अशोक ।
अन्त समै सो पाइहै सेनानी कौ लोक ॥

इति श्री बालकांडे सप्तत्रिंशतिः सर्गः ॥ ३७ ॥

छन्द ।

या रीति बिश्वामित्र गङ्गा की सुनाइ भली कथा ।
पुनि सगर भूपति की कथा भे कहत राघव सो जथा ॥
पूरब समैं भौ अवधि नृपगन सगर नामा ताहि कैं ।
पतिनी भई द्वै केशिनी सुमती सबै सुख चाहि कैं ॥

दोहा ।

बड़ी विदरभाधिप सुता छोटी गरुड़ बिहैन ।
ते दोऊ रानी भईं सगर भूप के ऐन ॥

चौपाई ।

दुहु तैं इकहु न भौ सुत प्यारौ । तबहिँ सगर तप करन बिचारौ॥
जाइ हिमांचल बड़ तप कीन्हौ । रानिन सहित महाब्रत लीन्हौ।
यों तप करत बरष सत पूजे । ह्वै प्रसन्न भृगु तब यह कूजे ॥
हे नृप तुम्हरे बहु सुत ह्वै हैं । ते सब प्रबल पराक्रम पैहैं ॥
ह्वै है इक सुत इक बनिता तैं । बंस बढ़हिगौ तुम्हरे जातैं ॥
इक तिय तैं पुनि साठ हजारे । तनय होंहिगे उदित अपारे ॥
चहहि जु तिय सो इक सुतजावे। चहहि जु साठ हजार खिलावे॥
तबहिँ सुबड़ि जु केशिनि रानी। तिहि माँग्यौ सुत एक सुबानी॥
लघु सुमतीहु तबहिँ तिहि ठाऊँ। माँगे साठ सहस सुत जाऊँ ॥
यों बरदाननि लहि तब राजा । भौ आवत निजपुर सुख साजा॥
तहँ जेठी तिय तैं इक भयऊ । सो असमंज तनय छबिछयऊ ॥
सुमती एक जु तूमडि जाई । तातैं साठ सहस भे भाई ॥
गरभपिण्ड भे प्रथमहि जेते । घृतकुम्भन मैं नाखि तेते ॥

तिन सब के परिपालन काजें । राखीं धाइन की जु समाजें ॥
कछु दिन गे तब पिंड तहांई । भे समरथ लहि तन तरुनाई ॥
जेठी तिय को जो सुत एकै । लाग्यो करन सुच्यति अबिवेकै ॥
पुरबासिन के सुत गहि बांहीं । भयहु डुबावत सहजू मांहीं ॥
आपु हँसहि लखि जब वे डूबैं । दुखित भये पुरजन मनसूबैं ॥
नृप तब असमंजहि के ताईं । काढ़ि दियहु पुर तैं रिपु नाईं ॥
अंसुमान तिहितें सुत भयऊ । पालक प्रजनि सु गुनगन ठयऊ॥

दोहा ।

सगर भूप ताही समैं अश्वमेध मष बेस ।
करिबे कौं चिन्तित भये अति बलवन्त नरेस ॥

इति बालकांडे अष्टविंशतिः सर्गः ॥ ३८ ॥

छन्द ।

यौं मुनि सुकौशिक सौं कथा श्रीराम पुनि बोले तबै ।
अब चरित मम पुरुखान कौ बिस्तार करि कहिये सबै ॥
कैसें सगर किय जग्य सुनि यौं मुनि तबहि भाषत भये ।
हौं कहत यह अद्भुत कथा सो सुनहु तुम अति छबि छये ॥

दोहा ।

विंध्य हिमाचल मध्य जो देश आरियावर्त्त ।
पुन्यभूमि तहँ सगर नृप अश्वमेध भे कर्त्त ॥

चौपाई ।

अँसुमान नृप नाती अच्छा । करत भयौ मख हय की रच्छा ॥

जा दिन अश्वहवन दिन भयऊ । तबहिँ इन्द्र हय हरि लै गयऊ ॥
तबहिँ पुरोहित ऋत्विज जेते । भूप सगर सौं बोले ते ते ॥
जीति तुरंगहरन हारे कौं । ल्यावहु अश्व सुमखवारे कौं ॥
तौ यह जग्य समापत ह्वैहै । ना हि तु सब श्रम यौंहीं जैहै ॥
तब नृप लखि सुत साठ हजारी । तिनसौं या विधि बचन उचारी ॥
हौं बिधिवत यह जग्य कर्योई । ता बिच बिघन सु आइ पर्योई ॥
तातैं हम दिच्छहि के माहीं । अंमुमान प्रोहितजुत घांहीं ॥
ब्रह्मचरजजुत बैठौ रैहौं । जब लौं अश्व न मख कौं पैहौं ॥
तातैं तुम हय हेरि लिआओ । भूमि खोदि या विधि जहँ पाओ ॥
तुम सब इक इक जोजन तांईं । खोदहु भूमि पुरुष गहिरांईं ॥
तब तिन एक पुरस भरिऔंड़ी । इक इक जोजन लांमी चौंड़ी ॥
लै हल सूल मुसल सर तोदी । साठ सहस जोजन महि खोदी ॥
तहँ अहि असुर नागगण जेते । पाये जहहिँ हनैं सब तेते ॥
तातैं शब्द भयङ्कर भारी । छाइरह्यौदिसि बिदिसि मझारी ॥
यौं खोदत सब जम्बू दीपै । फिरत भये चहुंदिशि पृथिवी पै ॥
तब सुर नाग असुर डरपेई । सबमिलि बिधिसौं कहत भयेई ॥
सगरभूपसुत सब उतपाती । महि खोदत ह्वै जगतबिघाती ॥

दोहा ।

जाहि जहाँ पावैं तहां ताहि हनत यौं घोर ।
हयहारक मखविघनकर यहै हमारो चोर ॥

इति बालकांडे एकोनचत्वारिंशः सर्गः ॥ ३९ ॥

छन्द ।

यों सुरबचन सुनि बिधि कह्यो यह धरनि धनि भगवान की ।
ह्वै कपिल हरि निज जोगबल याहैं धरैं सम प्रान की ॥
मुनिकपिलकोपहि सों सगरसुत भसम ह्वैवैंगे सबै ।
या बिधि बचन बिधिकथित सुनि निजनिज भवन गे सुर तबै ॥

दोहा ।

या बिधि खोदि मही सबै नृप सुत साठ हजार ।
जाइ कहत भे सगर सौं खोदी अवनि अपार ॥

चौपाई ।

सुर पिशाच दानवदल जेते । पाये जहँहि हनैं तहँ ते ते ॥
येतेहु पै हयचोर न पायौ । अब जु कहहु सो करहिँ उपायो ॥
ह्वै सरोस तब सगर उवाचे । पुनि खोदहु महि परहु न काचे ॥
मिलहि जहां हयहारक प्रानी । तिहिँ ल्यावहु यों सुनिपितुबानी ॥
खोदत भे पुनि सकल मही कौं । लखत भये तहँ दिग्गजही कौं ॥
जो यह महि मस्तक पर धारैं । बिरूपाक्ष नामा तन भारैं ॥
होत खेद वाको जब कबहीं । सीस हिलावत है वह तबहीं ॥
पृथिवी कँपत सकल यह यातैं । दिग्गज मानि प्रनति किय तातैं ॥
पूरब तैं पुनि दखिन दिशा कौं । खोदत चलत भये बसुधा कौं ॥
महापद्म दिग्गज तहँ देखौ । किय प्रनाम ताहैं तजि लेखौ ॥
दच्छिन ते पुनि पच्छिमही कौं । खोदि चले सबमिलि जु महीकौं ॥
तहँ दिग्गज सौमनस निहारयौ । किय प्रनाम ताहै तिहिँ धारयौ ॥
पच्छिम तैं पुनि उत्तर भूमी । खोदि चले सुसगरसुत घूमी ॥
भद्र नाम दिग्गज तहँ दीख्यौ । ताहिँ प्रनति किय नाइ सुसीसौ ॥

त्योंही बहुरि बिदिस ईसानैं । खोदि चले तहँ कपिल दिखानैं॥
तिन समीप हय चरत निहारी । भे प्रसन्न तब साठ हजारी ॥
बोलत भे तहँ सब यह बानी । हयहारक इक येही प्रानी ॥
या कहि शूल मुसल हल लीनैं । दौरे सब मुनि पर मतिहीनैं ॥
हम हैं सगरनृपति के जाये । तिनकौ हय तुम चोरि लिआये॥
हनत तुमहिँ अब को रखवारी । यह सुनि मुनि हुङ्कार उचारी ॥

दोहा ।

कपिलकथित हुंकार सौं नृपसुत साठि हजार ।
भये भसम कौ ढेर सब जरि बरि कैं इकबार ॥

इति बालकांडे चत्वारिंशतिः सर्गः ॥ ४० ॥

छन्द ।

नृपसगर तब पुत्रन गयें बहु दिन बिते यह जानि कैं ।
तहँ अंसुमानहि सौं कह्यौ बच प्रबल पोतहि मानि कैं ॥
तूं सूर बीर समर्थ सब बिधि बली विद्यावान है ।
तातैं खबरि काकान की पुनि यज्ञहयह्न आन है ॥

दोहा ।

मग मैं बीर बड़े बड़े तिनहिं हने के काज ।
धनुष बानि असि आदि लै साजहु अस्त्रसमाज ॥

चौपाई ।

पूजनजोग तिनहिँ नति ठनियौ । बिघनकरन चारिनकौं हनियौ॥
या विधि जाइ तुरँग वह आनौ । अंसुमान चलि भौ हरषानौ ॥
धनुष बान लैकर करबालौ । खोजहि लेत वहहि मग चालौ॥

सुरपूजित दिग्गज तहँ दख्यौ । किय प्रनाम ता कहँ सुविसेषौ॥
बूझि कुशल ये बचन उचारे । काका गे कित कहहु हमारे ॥
सुहय कहाँ यह सुनि मृदुबानी । तब दिग्गज यों बात बखानी ॥
खोज लेत मग यहहि सिधारौ । सिद्ध होइगौ काज तिहारौ ॥
यों चलि सब दिगदन्ति निहारे । मिलि तिनसौं लखि आसिखभारे
तहँ तें चलि पुनि जाइ निहारौ । भसम ढेर जो काकनवारौ ॥
अंसुमान तब दुख करि रोयौ । तहँहि तुरंग सुमख कौ जोयौ ॥
तब काकन के तरपन तांईं । चाह्यौ जल सुमिल्यौ न तहांईं॥
यों चहुँ ओर बिलोक तहाँहीं । गरुड़हिँ लखत भयो तिहिठाहीं॥
जो खगपति काकन को मामा । अंसुमान किय ताहि प्रनामा ॥
तबहिँ गरुड़ यह बोल बखानौ । हे नृपसुत कछु सोक न ठानौ ॥
इनकौ मरन जगत कौ चाह्यौ । तातें सबनि कपिलमुनि दाह्यौ॥
अब तिनको तरपन इहि ठाहीं । होइ सकत जगजल सौं नाहीं ॥
तरपन गङ्गाजल पावैंगे । तब सब तरि स्वर्गहि जावैंगे ॥
तातें तुम अब हय लै जाऊ । सगरहिँ मखपूरन करवाऊ ॥
अंसुमान तब हय लै आयौ । काकनि कौ सब चरित सुनायौ॥
सो सुनि सगर भयहु दुखभीनौ । विधिवत यज्ञ समापत कीनौ ॥
यों मख कर आये पुर माहीं । किय बिचार तहँ बहुदिन ताहीं॥
कैसे गंग अवनि पर आवैं । क्यौं पुनि मम संतति गति पावैं॥

दोहा ।

यौंहीं सोचत बरष तहँ बीते तीस हजार ।
गये सगरहू स्वर्ग कौं कर निज राज अपार ॥

इति श्री बालकांडे एकचत्वारिंशतिः सर्गः ॥४१॥

छन्द ।

भे अंसुमान तबै नृपति तिनकैं दिलीप तनै भये ।
सो सौंपि सुत कौं राज नृप तप करन हिमिगिरि कौं गये ॥
तपि बरष बत्तिस सहस लौं तप जात भे सुरलोक कौं ।
राजा भये सु दिलीप तब तिन किय यहै पुनि सोक कौं ॥

दोहा ।

गंगा आवैं कौन बिधि भूमिलोक में होइ ।
यों सोचत तिनकैं भये पुत्र भगीरथ राइ ॥

चौपाई ।

तीस हजार बरष करि राजै । गे दिलीप सुरलोकममाजै ॥
भे तहँ तबहिँ भगीरथ राजा । गंगहेत सुतहित तप साजा ॥
राजभार मन्त्रिन के ताँईं । दै करि गे गोकरन जहाँईं ॥
तहँ तब गंग लिआवन काजैं । किय तप घोर भगीरथ राजैं ॥
ह्वै ऊरधभुज बहु दिन ताँईं । इन्द्री पंचअगिन तपिताँईं ॥
इक इक मास बितै इक ग्रासै । खात भये करि मास उपासै ॥
यों बहु बरष सहस्र बिताये । ह्वै प्रसन्न तब तहँ बिधि आये ॥
बोले सुनहु भगीरथ राया । तुम्हरे तप हम बहु सुख पाया ॥
चहहु सु अब माँगहु बरदानैं । सुनि सु भगीरथ बचन बखानैं ॥
सगरसुतन के तरपन ताहीं । चहहुँ गंगजल भूतल माहीं ॥
तहँ पुरुषन की भसम बहैहैं । यों ते सब सुरलोक पठैहैं ॥
इक इक्ष्वाककुलहि के हेतू । चहहुँ पुत्र पावन कुल केतू ॥
जौ प्रसन्न तौ है बर दीजै । तब बोले बिधि नृप सुनि लीजै ॥

सुरपूजित दिग्गज तहँ दरस्यौ । किय प्रनाम ता कहँ सुविसेषौ॥
बूझि कुशल ये बचन उचारे । काका गे कित कहहु हमारे ॥
सुहय कहाँ यह सुनि मृदुबानी । तब दिग्गज यों बात बखानी ॥
खोज लेत मग यहहि सिधारी । सिद्ध होइगो काज तिहारी ॥
यों चलि सब दिगदन्ति निहारे । मिलि तिनसौं लखि आसिखभारे
तहँ तें चलि पुनि जाइ निहारी । भसम ढेर जो काकनवारी ॥
अंसुमान तब दुख करि रोयौ । तहँहि तुरंग सुमख कौ जोयौ ॥
तब काकन के तरपन तांई । चाह्यौ जल सुमिल्यौ न तहांई॥
यों चहुँ ओर बिलोक तहाँहीं । गरुड़हिँ लखत भयो तिहिठाहीं॥
जो खगपति काकन को मामा । अंसुमान किय ताहि प्रनामा ॥
तबहिँ गरुड़ यह बोल बखानौ । हे नृपसुत कछु सोक न ठानौ ॥
इनकौ मरन जगत कौ चाह्यौ । तातैं सबनि कपिलमुनि दाह्यौ॥
अब तिनको तरपन इहि ठाहीं । होइ सकत जगजल सौं नाहीं ॥
तरपन गङ्गाजल पावैंगे । तब सब तरि स्वर्गहि जावैंगे ॥
तातैं तुम अब हय लै जाऊ । सगरहिँ मखपूरन करवाऊ ॥
अंसुमान तब हय लै आयौ । काकनि कौ सब चरित सुनायौ॥
सो सुनि सगर भयहु दुखभीनौ । विधिवत यज्ञ समापत कीनौ ॥
यों मख कर आये पुर माहीं । किय बिचार तहँ बहुदिन ताहीं॥
कैसे गंग अवनि पर आवैं । क्यौं पुनि मम संतति गति पावैं॥

दोहा ।

यौंहीं सोचत बरष तहँ बीते तीस हजार ।
गये सगरहू स्वर्ग कौं कर निज राज अपार ॥

इति श्री बालकांडे एकचत्वारिंशतिः सर्गः ॥४१॥

छन्द ।

भे अंसुमान तबै नृपति तिनकैं दिलीप तनै भये ।
सो सौंपि सुत कौं राज नृप तप करन हिमिगिरि कौं गये ॥
तपि बरष बत्तिस सहस लौं तप जात भे सुरलाक कौं ।
राजा भये सु दिलीप तब तिन किय यहै पुनि सोक कौं ॥

दोहा ।

गंगा आवैं कौन बिधि भूमिलोक में हाइ ।
यौं सोचत तिनकें भये पुत्र भगीरथ राइ ॥

चौपाई ।

तीस हजार बरष करि राजै । गे दिलीप सुरलोकसमाजै ॥
भे तहँ तबहिँ भगीरथ राजा । गंगहेत सुतहित तप साजा ॥
राजभार मन्त्रिन के ताँईं । दै करि गे गोकरन जहाँईं ॥
तहँ तब गंग लिआवन काजैं । किय तप घोर भगीरथ राजैं ॥
ह्वै ऊरधभुज बहु दिन ताँईं । इन्द्री पंचअगिन तपिताँईं ॥
इक इक मास बितै इक ग्रासै । खात भये करि मास उपासै ॥
यौं बहु बरष सहस्र बिताये । ह्वै प्रसन्न तब तहँ बिधि आये ॥
बोलि सुनहु भगीरथ राया । तुम्हरे तप हम बहु सुख पाया ॥
चहहु सु अब माँगहु बरदानैं । सुनि सु भगीरथ बचन बखानैं ॥
सगरसुतन के तरपन ताहीं । चहँहु गंगजल भूतल माहीं ॥
तहँ पुरुषन की भसम बहैहैं । यौं ते सब सुरलोक पठैहैं ॥
इक इक्ष्वाककुलहि के हेतू । चहहुँ पुत्र पावन कुल केतू ॥
जौ प्रसन्न तौ दै बर दीजै । तब बोले बिधि नृप सुनि लीजै ॥

तुम्हरे सफल मनोरथ दोऊ । होवहिंगे संशय नहिं कोऊ ॥
गंगधारधारन के काजा । करहु प्रसन्न महेशहिँ राजा ॥
नभ तैं परत सु जल की धारा । सहि न सकहिगी भूमि अपारा॥
तीन धार धारन के ताँईं । बिन शिव समरथ कोऊ नाँईं॥

दोहा।

भूप भगीरथ सौं तहहिँ यौं चतुरानन भाषि ।
चढ़ि सुहंस पर जात भे निजलोकहि अभिलाषि ॥

इति श्री बालकांडे द्विचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४२ ॥

छन्द।

तहँ नृप भगीरथ शिवप्रसादन हेत तप या विधि कियौ ।
निज पग-अँगूठहि ह्वै खड़े इक बरस व्रत अनसन लियौ ॥
तब ह्वै प्रसन्न कह्यौ हरहु हम गंग धारहिंगे अबै ।
यह कहत शिव के गंग नभ तैं निकसि टूटि परी तबै ॥

दोहा।

मन में करत बिचार यह परी शम्भु पर आय।
पातालहिं लै जाउँगी अबहीं हरहिं बहाय ॥

चौपाई।

तबशिव समुझि सरितअभिमानैं। बाँधि जटन राखी सिरथानैं ॥
तहँ बहुदिन निकसन के तांईं । गंग जतन बहु किय तिहि ठांईं॥
निकस सकी न सहस सम बीते। घूमी तितहिँ गरब सब रीते ॥

बहुरि भगीरथ तपबिधि ठानी । ह्वै प्रसन्न तब शिव बरदानी ॥
बिंदु-सरोवर हिमगिरि माहीं । तजिय जटनि तैं गंग तहांहीं ॥
धारा सात तबहिँ लहि गंगा । निकसि बही तहँ तैं सुतरंगा ॥
पावनि अहिलादिनि अभिरामा । तीजी धार नलिनि यह नामा ॥
ते तहँ तैं दिशि पूरबही कौं । बहत भई अति हित सबही कौं ॥
सीता सिंधु सुचक्षु सु तीनौ । धारनि गमन पच्छिम कौं कीनौ ॥
बहुरि सातहीं धार सु आछैं । आई सुरथ भगी-रथ पाछैं ॥
प्रथम अकाशहि तैं जो आई । जनु बिज्जुल सित सहित जुन्हाई ॥
इहिबिधि जोति जमातिन जूटी । सँघि शिवजटनि मरू करि छूटी ॥
तहँतैं चलि इमि छिति परछाजी । कमठ मीन मकरानि समाजी ॥
जहँ जहँ जबहि भगीरथ राजा । भे चालत रथचढ़ि कृतकाजा ॥
तहँ तहँ तिहि नृप के रथ-पाछैं । चलत भई सुरसरि अति आछैं ॥
कहुँअति चपल कहूं अति मंदा । कहुँ मध्यम गति गहत अमंदा ॥
तब सुर सकल बिमान चढ़ैई । भे देखत छबि छटनि मतेई ॥
तहँ तब सुर मुनि भूतलबासी । भे अन्हात लहि आँनदरासी ॥
करिकरि दूरि कलुष निजठानैं । जात भये सब निज निज थानैं ॥
गंगचलत इमि मुनिकृत आला । दीन्ही बोरि तहँहि मखशाला ॥
जन्हु तबहिँ सुरसरि के तांई । निजतपबल पी गे इकहांई ॥
तब गंधरब सकल सुर आए । जन्हुहिँ तहँ ये बचन सुनाए ॥
होवहिगी मुनि तुव यह कन्या । तातैं गंग तजहु जगधन्या ॥
तब मुनि निज-कानन ह्वै गंगा । दीन्ही छोड़ि सु तरलतरंगा ॥
तब तैं जन्हुसुता कहवाई । पुनि नृपरथ कृत पथहिँ सिधाई ॥

दोहा ।

या बिधि जग पावन करति हरति पापसमुदाइ ।
जहाँ सगरसंततिभसम तहाँ सु पहुँची आइ ॥

इति श्री बालकांडे त्रिचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४३ ॥

छन्द ।

यौं सगरसंतति की भसम जब गंगजलधारनि बही ।
तब आइ चतुरानन भगीरथ भूप सौं बानी कही ॥
तुम्हरे प्रभावनि सगरसुत सुरलोक कौं पहुँचे अबै ।
जब लौं समुद में नीर तब लगि स्वर्ग में बसिहैं सबै ॥

दोहा ।

गंगहि जानौ निज सुता जो जग अति अभिराम ।
भागीरथी कहाइहै बहुरि त्रिपथगा नाम ॥

चौपाई ।

सत्यसंध तुम भे अब राजा । किय पन पूरन जगजस साजा ॥
करिविचार जु दिलीप न आनौ । सो तुम गंग ल्याय जग जानौ ॥
अब अन्हाउ तुम सुरसरि माहीं । या कहि गे बिधि निज थलपांहीं ॥
तहँ अन्हाइ करि तरपन त्यौंहीं । पहुँचे अवध नगर सुख सौंहीं ॥
किय तहँ राज भगीरथ भायौ । सकलप्रजनि अति आनदपायौ ॥
या बिधि गंगकथा सु सुनाई । भौ अब साँझ समय रघुराई ॥
जो यह गंगचरित जन कोऊ । पढ़हि सुनहि अघ मोचत सोऊ ॥
सुधन अँनद संतति अति आयू । सुनि पावत सब सुख समुदायू ॥

दोहा ।

तापर होत प्रसन्न सब देव पितर सुख पाइ ।
सकल पाप परिहरि इतहि स्वर्गलोक पुनि जाइ ॥

इति श्री बालकांडे चतुश्चत्वारिंशतिः सर्गः ॥ ४४ ॥

छन्द ।

यौं सुनि चरित सुरसरित के श्रीराम लछमनहु तबै ।
तहँ निशि बिताइ प्रभात लखि उठि न्हाइ जप कर त्यौं सबै ॥
चढ़ि नाव गंगा उतरि पहुँचे उदित उत्तर पारहीं ।
सुभ लखि बिशाला नाम नगरी राम बूझत भे तहीं ॥

दोहा ।

हे मुनि कौशिक कौन सी यह नगरी जु दिखाइ ।
रहत कौन से नृपति कौ बंश कहहु समुझाइ ॥

चौपाई ।

सुनि मुनि भे बोलत बरबानी । सुनहु राम इहि देश-कहानी ॥
एक समै सुभ सतजुग ही मै । भे सुर असुर अपार मही मै ॥
अति बलवान धरमध्रुवधारी । तिन यह बुद्धि बिशाल बिचारी ॥
हूजे अजर अमर गतरोगी । या हित अमृत मिलहि तौ भोगी
करि बिचार इमि सब अनुरागे । छीरसमुद मथिवे महँ लागे ॥
मन्दरगिरि तहँ कीन्हि मथानी । बासुकि अहिँहि सु रसरी ठानी ॥
मथन करत इमि बासुकि भाख्यौ । पाइ श्रमहि मुख तैं बिष डार्यौ ॥
तातैं प्रथमहि अगिन-समाना । सु बिष हलाहल भौ जगजाना ॥

तब तहँ जगत चराचर जेते । लागे जरन बरन सब तेते ॥
त्राहि त्राहि कहि सब सुरबानी । सुभग सदाशिव की नुति ठानी ॥
तबहिँ सदाशिव शङ्कर स्वामी । भे परगट हरि खगपतिगामी ॥
छलकरि हरि तब हर सों कह्यऊ । समुदमथत इत जो कछु लह्यऊ ॥
ताहि प्रथम अब आपुहि लीजे । सभय सुरनि निरभय करि दीजे ॥
या कहि हरि अन्तरहित भयऊ । सुविष हलाहल हर पी गयऊ ॥
फिरि सुरमथन लगे जु उताले । गिरि मन्दर धसि गयहु पताले ॥
तब पुनि देवन बिष्णुबड़ाई । बिबिधि भाँति निज२ मुख गाई ॥
तुम इक प्रभुगति देवन के हौ । सरनागतप्रतिपालक जे हौ ॥
सुरनसहित गिरि मन्दर भारी । ताहि उठावहु करि रखवारी ॥
तब हरि करि कूरम-तन तैसो । पीठि उपरि धरि गिरवर पैसो ॥
पैठि समुद इमि कीन्हि सहाया । सकल सुरन पर राखि सुदाया ॥
पुनि भुज चहुनि सुआयुधधारी । भे बैठत गिरि ऊपर भारी ॥
मध्य भाग सँग देवनही के । मथत भये पुनि सिंधु सरीके ॥
या विधि मथत सहस सम जातें । भिषक धनन्तरि निकस्यो तातें ॥
करनि कमण्डल दण्ड सुलीनें । सकल वेद-विद्यानि प्रवीनें ॥
साठिकोटिपुनिनिसरिदिखानी । रम्भादिक अपसर छबिखानी ॥
इकइक सँग बहुबिधि बहुदासी । तिनहिँ देखि सुर असुर सुभासी ॥
ये हमरी हमरी ये ती हैं । या कहि बाँटि लई सिगरी हैं ॥
बरुनसुता निसरी जु सुरा है । देवन बिन समुझैं लिय ताहै ॥
तातें सुर सब देव कहाये । लीन्हि न जिन ते असुर गनाये ॥
उच्चैःश्रव पुनि हय कढ़ि आयौ । रतन कौसतुभ जो हरि भायौ ॥
ता पीछूं पुनि अमृत कढ़्योई । शुचि सुगन्ध छबिवृन्द बढ़्योई ॥

ता हित सुर अरु असुर लराई । करत भये निजनिज बल पाई ॥
असुरन सब सुर मारि भजाये । तब हरि मोहनि रूप लिआये ॥
यों जब अमृत चोरि हरि चाले । दौरे असुर तबहिँ परि लाले ॥
जे हरि-सनमुख रनहित आये । ते सब असुर सँघारि गिराये ॥

दोहा ।

यों इक हरि की कृपहिं सो लहि पियूष निज काज ।
देत भये सुर इन्द्र कौं सकल स्वर्ग कौ राज ॥

इति श्री बालकांडे पंचचत्वारिंशः सर्गः ॥ ४५ ॥

छन्द ।

यों हरि हनैं दिति के तनय तब दितिहु दुख करि यों कह्यौ ।
निज नाथ कश्यप सों सुनहु मम बंश इक हरिही दयौ ॥
तातैं जु इन्द्रहि कों जिते अस पुत्र मोकहँ दीजिये ।
तब कहत भे कश्यप बचन दिति सों यहै सुनि लीजिये ॥

दोहा ।

इक हजारही बरष लौं ह्वै सुचि तूँ तप ठान ।
तब तेरे सुत होइगौ इन्द्रबिजेता जान ॥

चौपाई ।

या कहि करि पुनि परस दितीकों । गे कश्यप तप करन सु नीकों ॥
ता पीछूं दिति आइ यहांहीं । किय तप देश कुसप्लवमाहीं ॥
करति सुतप लखि दितिहिँ सुरेसू । किय इत मात सुसेवन बेसू ॥
इंधन समिध कुसा फल मूला । ल्याकरि देत भयहु अनुकूला ॥

कम्बरि हाथ चरन माता के । भयहु सुदावत बहु-तप-थाके ॥
यों दितिसेवन करत अपारा । भे दस सम घटि बरस हजारा॥
तब इकदिन दिति हितकरि बोली। सुनहु इन्द्र मम बात अडोली॥
मोहि करत इत तप पति-गी ते । दस सम घाटि सहस सम बीते॥
ते दस बरस बितें सुरराई । ह्रगनि दिखिहिगो तूं लघुभाई॥
हौं सुत चह्यउ जु तोकहँ जीते । अब तुम होहु सुरेश अभीते ॥
तुव कृत लखि सेवन ह्वै राजी । कहत मुकीजहु सत मख जाजी॥
छोड़ि बयर तुम दूनहुं भाई । सुरराज कीजहु सुखदाई ॥
तुव पितु गरभ उदर मम राखी । गो तप करन तनयअभिलाषी॥
या कहि दिति इकदिन तहँ सोई । भर दुपहर अति अशुचि समोई॥
राखि जु पाइत तरफ सुसीसा । कीन्हें चरन जहाँहि उसीसा ॥
यों लखि सोवति दितिहिँ सुरेसू । ह्वै हरषित किय उदर-प्रबेसू ॥
लै तहँ कुलिश गरभ को पिण्डा । कीन्हिसिकतरिजुसातसुखंडा॥
गरभपिण्ड वह तहँ तब रोयो । तबदितिजागिचरितयहजोयो॥
रोवत गरभ कह्यहु सुरराई । मति रोवहु मति रोवहु भाई ।
तब दिति कह्यहु समुझि सुचाते । मति मारहु मति मारहु भ्राते॥
सुनत सुरेस निकस तहँ आयो । जोरि सकर यह बचन सुनायो॥
ह्वै यों अशुचि जननि तूं सोई । मैं तब उदरप्रबेस कियोई ॥

दोहा ।

मम नाशक यह गरभ तुव यहै समुझि मनमाँह ।
सात टूक किय बज्र सौं करु यह माफ गुनाँह ॥

इति श्री बालकांडे षट्चत्वारिंशतिः सर्गः ॥ ४६ ॥

छन्द ।

लखि सात खण्ड सुगर्भ के तब इन्द्र सों दिति यह कही ।
हे इन्द्र तोहि न दोष कछु यह दोष मेरोई सही ॥
इक पिण्ड के किय सात टूक सुबज्र सों निजही करें ।
तातें इनहिं दे सात थल जहँ जाइये सब संचरें ॥

दोहा ।

अरु ये सातहु बात मम पावैं मारुत नाम ।
इन हित सातहु थान तैं हौं भाषत अभिराम ॥

छन्द रोला ।

इन्द्रलोक विधिलोक अन्तरिच्छहु दिशि चारी ।
तहँा जाइ ये रहहिं करहिं निस दिन संचारी ॥
ये सुनि दितिबच इन्द्र सातहू मारुत काजै ।
दै करि साती थान सदिति गौ अपने राजै ॥
सुनहु राम यौं इन्द्र रह्यउ इह देश मझारी ।
इतहीं सुत हित कियौ सुतप कश्यप की नारी ॥
ता पीछू इत लह्यउ पुत्र इच्छाकुनरेशू ।
जाकौ नाम बिसाल यहै भौ जाहिर देशू ॥

चौपाई ।

तिहिँ बिसाल यह नगर बसायौ । तातें नाम बिसालहि पायौ ॥
अब तिहिँ नृपति सुबंसहिमाहीं । सुमति नाम नृप बसत यहाहीं ॥
है अतिसुमति सुमति यह राजा । धरमधुरन्धर धीर-समाजा ॥
तातें इक निशि इतहिँ बसीजे । प्रात जनक नृप जाइ लखीजे ॥
या बिधि कहत कथा इहि ठाहीं । आयौ सुमति मुनीश्वर पाहीं ॥

किय प्रनाम पग परसि मुनी के । अरघ आचमन दै अति नीके ॥
यों मिलि बूझि कुशलपुनित्योंहीं । बोलि सुमति नजरि करि सौंहीं ॥

दोहा ।

हे मुनि तुव पद-परस तैं भयौ धन्य मम देश ।
लहि दरशन हौंहूँ भयौ धन्य सुदिन यह बेश ॥

इति श्री बालकांडे सप्तचत्वारिंशतिः सर्गः ॥ ४७ ॥

छन्द ।

यों पूजि कौशिक कौं सुमति पुनि प्रनति करि बूझत भये ।
ये कौन के सुत संग सोभित श्याम गौर प्रभामये ॥
राजीवलोचन बय कुमार सुकाकपच्छन कौं धरैं ।
बाँधें निषंग कृपानह्न कटि धनुष सर निज कर करैं ॥

दोहा ।

किधौं अश्विनी के तनय कै तन धारि अनंग ।
ये त्रिभुवन के बिजय कौं भये राउरे संग ॥

चौपाई ।

कोमल चरन कठिन मगमांहीं । क्यों आये चलि चपल तहांहीं ॥
यों सुनि सुमतिबचन मुनि बोले । ये दशरथनृपतनय अतोले ॥
नाम राम लछमन दुहुँ भाई । या कहि सकल कथा सुसुनाई ॥
सो सुनि सुमति बहुत सुखपायो । किय अतिआदरभाव सुहायो ॥
यों इक निशि तहँ बास रघुराई । भे चालत पुनि मुनि सँग पाई ॥
त्यों चलि निरखिजनकपुरछाजौ । सब मिलि भे सुसराहत साजौ ॥

तहँ लखि नगरनिकटिबनमाहीं। आश्रम इक निरजन जु सदाहीं॥
भे बूझत मुनि सों रघुराया । किहिँ ऋषिअस यह आश्रमछाया॥
बसत न जहँ ऋषिइकहु लखीजै। भो ऊजर कब तें मुकहीजै ॥
रामबचन सुनि कौशिककह्यऊ । आगें इक मुनि गौतम रह्यऊ ॥
तिहिँ इत रचि यह आश्रम ऐसो। किय तप नारिसहित मुनितैसो॥
करत सुतप बहु बरषन ताईं । लख्यहु अहिल्यहि इन्द्र यहांईं॥
धरि मुनिगौतमभेष सनेही । भो बोलत मुनितिय सों येही ॥
चहहुँ सुरत तुव सँग मनमानो । सुनत बचन तिय इन्द्र पिछानो॥
करि रति दुहुन बहुत सुखपायो । बहुरि परसपर प्रेम बढ़ायो ॥
मुनितिय तब सुरपति सों भाषी । जाहु जलद अब जहँ सुरसाखी॥
जो कहुं मुनि इत यों लखि पैहैं। तौ हम तुमहि भसम करि देहैं॥
यों मुनिसापडरनि अमरेसू । चल्यहु निकसि धारहि मुनिभेसू॥
न्हाइ तबहिँ मुनि गौतम आयो। सुकरकमण्डल भर जल छायो ॥
धारहिँ दरभ समिध मृगछाला । निरखि मुनिहिँ डरप्यो सुरपाला॥
मुनिहुं लख्यौ सुरपति निजबेसू। भो जानत छल कीन्ह सुरेसू ॥
तब करि कोप तहँहि मुनिराई । इन्द्रहिँ दीन्हिसि शाप सुनाई ॥
रे खल इन्द्र न तुहि यह चाही । धरि मम भेष छली मम-ब्याही ॥
तातें इह कुकरम के मारें । वृषनविहीन रहहु तन धारें ॥
कहतहिँ इन्द्रवृषन खसि परयऊ । तब पुनि मुनिक्रुधतियपरकरयऊ॥
दीन्हिहि शाप सहस सम ताईं । भखत वायु रहु अलखि इहांईं ॥
जब इत राम सुगुरु सँग ऐहैं । परसि तोहिँ पावन करि देहैं ॥
तूं तब तजि मद मोह लुभाई । पूजहिगी बिधिवत रघुराई ॥
तब तूं लहि निज सुभग सरूपै । आवहिगी मम पास अनूपै ॥

दै गौतम ऋषि शाप अहिल्यै । गे तप हित हिमगिरिहिं इकल्यै॥

दोहा ।

हे राघव रघुवंशमनि दशरथराजकुमार ।
ता दिन तें यह आशरम या बिधि पऱ्यहु उजार ॥

इति श्री बालकांडे अष्टचत्वारिंशतिः सर्गः ॥ ४८ ॥

छन्द ।

ह्वै वृषनहीन सुरेस पावक आदि देवन सों कह्यौ ।
मैं इकहिँ तुम सब के लियें यह शाप गौतम तें लह्यौ ॥
तातैं भयौ हौं वृषन बिन अलखै अहिल्याहू भई ।
तपहीन ह्वै मुनि क्रोध सों तिहिँ बाट हिमगिरि की लई ॥

दोहा ।

हौं कराइ रिस गौतमहिं तपखण्डित करि दीन ।
काज कियौ तुम सबनि कौं हौं भौ वृषनबिहीन ॥

चौपाई ।

तातैं तुम बर देहु सु यौंही । जातैं वृषन हमारे हौंही ॥
तब पितरन सों सुर यह बानी । कहत भये तुम हौ अतिदानी॥
जो तुम्हरो यह मेढ़ा बैसै । ताकै वृषन सुदेहु सुरेसै ॥
वृषनहीन मेढ़ा जो कोऊ । दैहै तुमहि सु तुव प्रिय होऊ ॥
यों सुनि दिव्य पितर सुरबानी । मेषवृषन भे देत निदानी ॥
या बिधि वृषन सु इन्द्रहु पाये । मेषवृषन यह नाम कहाये ॥
ता दिन तें गतवृषन सुमेषौ । देत दिव्य पितरन कौं देखौ ॥

इन्द्र कथा इमि तुमहि सुनाई । चलहु आश्रमहि अब रघुराई ॥
अलख अहिल्यहि तुम उद्धरऊ । गौतम मुनिबच साँचे करऊ ॥
यों सुनि राम सुदशरथप्यारे । आइ आशरम बीच निहारे ॥
धूमरहित ज्यों अगिन दिखाई । यों तप तेज जुन्हाई छाई ॥
शापअन्त लहि तबहिँ अहिल्या । नजरि परी रामहिँ सुइकल्या ॥
भे परसत पग सों रघुराया । लह्यउ रूप पावन मुनिजाया
तबहिँ रामपूजन तिहिँ ठानी । करि षोड़श उपचार बिधानी ॥
पुनि कर जोरि सुकीन्हि बड़ाई । धन्य राम तुम सब-सुखदाई ॥
मो सम अति पापिनि जो नारी । सो निज पगहिँ परसि उद्धारी ॥
यों सुनि राम तबहिँ ह्वै राजी । लै पूजन मुनि नारि निवाजी ॥
बरसि सुमन नभ दुन्दभि दैकैं । भे भाषत सुर जय जय कैंकैं ॥
आइ अहिल्यहिँ सुरनि सराह्यौ । रामचरन-रज लहि अघ दाह्यौ ॥
तातैं तुव सम को अस नारी । जाहि छुवहिँ पग अवधबिहारी ॥
तजि तहँ शाप अहिल्या योंही । मिलति भई मुनि गौतम कोंही ॥

दोहा ।

यौं उधारि मुनिनारि तब तहँ तैं दोऊ भाइ ।
चले जनकपुर पेषिवें कौशिक-सँग हरषाइ ॥

इति श्री बालकांडे एकोनपंचाशतः सर्गः ॥ ४९ ॥

छन्द ।

तहँ तैं सुविश्वामित्र चलि ईशानकोनहिँ कौं गये ।
तहँ यज्ञशाला जनकनृप किय ताहि सब देखत भये ॥
तहँ रामचन्द्र बिलोकि मखवर सुगुरु सौं भाखि तबै ।
नृपजनकयज्ञ बिसाल अति यह सुविधि सोभित है सबै ॥

दोहा ।

बैदिक नामा देश के दिखियत बिप्र अपार ।
ढेरि सकल सामानि के अन्नन के सु-पहार ॥

चौपाई ।

अब अपने सँग सकल ऋषिन के । सकट सैकरन सामग्रिन के ॥
तातें इक सुभ थान बिचारी । तहँहिं निवसि सब सकट उतारी ॥
यों सुनि मुनि सुभथान बिचारी । भे उतरत सँग अवधबिहारी ॥
तब यह खबर जनकनृप पाई । सतानन्दयुत पहुंचे आई ॥
किय बिधिवत मुनिपूजन आछैं । कुशल प्रश्न भे पूछत पाछैं ॥
बूझि कुशल मुनि सों नृप कह्यऊ । आजुहि सफल जनम मम भयऊ ॥
बिन मख कियहुं सुमखफलपायो । भयहु धन्य मम यज्ञ सुहायो ॥
मोपर अमित अनुग्रह कीन्हो । समुझि सुसेवक दरस जु दीन्हो ॥
मखदिच्छा यह दस दिन ह्वै है । पुनि हविभाग सुरन कौं ह्वै है ॥
सो यह मम मख तुमहुं निहारी । होहि न बिघन लहहुं फलभारी ॥
जनक निरखि पुनि दोउ भाई । भे बूझत मुनि सों हरषाई ॥
ये कुमार तुम सँग किनके हैं । सोभित नर नारायन से हैं ॥
उदित अश्विनीसुत सम रूरे । सिंह समान पराक्रम पूरे ॥
करत गमन गजगति की नाईं । शीलसमुद्र भुजा जनु भाई ॥
बयकुमार सुकुमार शरीरा । श्यामल गौर गुननि गम्भीरा ॥
कटि निषङ्ग लघु खड्ग सुहाये । धनुष बान करकमलन छाये ॥
काकपच्छ कुन्तल घुंघुरारे । तजि रविभय तम मनहुं सुखारे ॥
दीरघनयन असीसी से हैं । तन निरमल मनि-सीसे से हैं ॥
नखसिख अंग सबै इमि पाये । जनु त्रिभुवनछवि लूटिलिआये ॥

इन महँ तेज लसत अब ऐसें । डाँक उपरि मनि राजत जैसें ॥
पीतबसनदुति दसननि छाई । मानहु तड़ित समेत जुन्हाई ॥
देत सुभग सोभहि कों सोभा । बरनि सकहि इनकी अब कोभा ॥
धन इनके पितु मात जसीले । पाये जिन अस तनय छबीले ॥
कठिन भूमि ये पाँव पियादें । भे तुम्हरे सँग कौ सजि सादें ॥
नाम कहहु सु कहा इनके हैं । यों सुनि मुनि तब भाषत भे हैं ॥
सुनहु जनक ये दोऊ भ्राता । दशरथनृपसुत मम मख त्राता ॥
रामचन्द्र लछमन सुभ नामा । धरमधुरन्धर धीरज-धामा ॥
इनहिं सुमख रच्छनहित लागी । हौं ल्यायहु दशरथ सों मागी ॥
मग चालत इन दुहुन जु भारी । प्रबल ताड़िका मारि सँघारी ॥
हनि मारीच समुद्र पठायौ । इक सर मारि सुबाहु गिरायौ ॥
लहि सहाय इनकौ अब ऐसो । हौंहूं किय मखपूरन तैसौ ॥
हनि निसिचर सिद्धाश्रमबासी । किय निरभय मुनिगन तपरासी ॥
तहँ तुव मख की खबरि जु पाई । मम सँग तबहिं चले दुहुं भाई ॥
न्हाइ सोननद गंग अन्हाये । बहुरि बिशालापुर कहँ आये ॥
तहँ तें चलि तुव पुर के पासे । लखि मुनिगौतम आश्रम बासे ॥
तहहिँ अहिल्या अधम उधारी । निजपग परसि जु गौतमनारी ॥
तहँ तें चलि इत लीन्हि बसेरौ । यों आये इत लहि सँग मेरौ ॥
तुम्हरे गेह धनुष जो भार्यौ । ताहि चहत दुहु बंधु निहार्यौ ॥

दोहा ।

या विधि विश्वामित्र तहँ राम-आगमन हेत ।
कहत भये नृपजनक सों औरहु कथन समेत ॥

इति श्री बालकांडे पंचाशत्तमः सर्गः ॥ ५० ॥

छन्द।

या रीति विश्वामित्रवच सुनि सदानन्द प्रसन्न ह्वै ।
बोले सुकौशिक सों हरषि लखि राजपुत्र सुधन्य ह्वै ॥
अति अलख मम माता अहिल्या लखी इन कैसें कही।
मम मातुकृत पूजन सुराघव लह्यहु कै नाहीं लही ॥

दोहा।

पापकरम जो इंद्रकृत सुन्यौ कि नाहिं रघुराइ ।
मुनि गौतम सौं मात मम मिली सु कैसें जाइ ॥

चौपाई

सुनि मुनि यह गौतमसुत बानी। सकल कथा जु भई सुबखानी ॥
सुनहु सतानँद ज्यौं जमदग्नैं । मिली रेनुका अमल अभग्नैं ॥
त्यौंही तुव जननी तजि शापै । मिली सुमुनि गौतम सों आपै॥
यों सुनि तबहिँ सतानँद भाषे । राघव सों अतिहित अभिलाषे॥
तुम राघव मम भागनि आये । धनि मुनिकौशिक से गुरु पाये॥
ये ब्रह्मर्षि सुतप सरनैं हैं । इनके चरित सु मम जानैं हैं ॥
तुम सम धनि को राजदुलारे । मुनि कौशिक जिनके रखवारे॥
सुनहु राम मुनिचरित जु जैसौ। होत भयहु बरनत अब तैसौ ॥
प्रथमहि ये कौशिक महिचाता। गाधितनय कुशवंशी दाता ॥
भे नृप चक्रवती महिमाहीं । राज कियहु बहु बरषन ताहीं॥
तबहिँ सुइक अच्छौहिनि सेना। लै सँग फिरत भये महि ऐना ॥
बहु बन देश नगर मसियाये । चलि बसिष्ट के आश्रम आये ॥
जहँ खग मृग तरु तपसी छाये। सुर किन्नर ब्रह्मर्षि सुहाये ॥
भखत पवन इक एकैं पानी । सूखे फलन मूल फल आनी ॥

दोहा ।

बालखिल्य वैखानसहु जँह ऋषि परम पवित्र ।
अस बसिष्ट कौं आशरम देख्यौ विश्वामित्र ॥

इति श्री बालकांडे एकपंचाशत्तमः सर्गः ॥ ५१ ॥

छन्द ।

तहँ लखि बशिष्टहिँ नृपति कौशिक किय प्रनाम सुमुनि लियौ।
करि आउ आदर बहु सुआसन पर नृपति कौं थित कियौ ॥
तहँ दुहु दुहुन सों परसपर फिर फिर कुशल पूछत भये ।
करि कुशल प्रश्न बसिष्ट नृप कौं मूल फल निर्मल दये ॥

दोहा ।

धरमकथा बहु बिधि कहत बैठे दुहुँ सुख पाइ ।
बोले बिश्वामित्र सों यों बसिष्ट ऋषिराइ ॥

चौपाई

सेनसहित यह न्यौतौ लीजे । भोजन आज इतहि मिलि कीजे॥
कब तुमसों नृप अतिथि जु पैहौं। जाहि जिमाइ जगतजस लैहौं॥
सुनि मुनिबचन महीप उचारे । भे हम तृपित बचन सुनि थारे॥
अति आतिथ्य प्रथम तुम कीन्हो। सुफल मूल आसन जो दीन्हो ॥
पाइ दरस तुव अति सुख पायो। पूजनीय तुम मनबचकायो ॥
अबहीं करत प्रनाम सुभाषैं । नेह नजरि रहियौ इमि राखैं ॥
यों सुनि मुनि पुनि न्यौतो दीन्हों। कौशिक तबहिँ कबूल सुकीन्हों॥
तब बुलाइ मुनि सबला धेनू । कामधेन कन्या अति-येनू ॥
तासों कहत जु भे रघुराई । सेनसहित नृप देहु जिमाई ॥

दोहा ।

षटरस ब्रिंजन चतुरबिधि सदभोजन मदपान ।
जो चाहै ताहै सु दै करु नृप कौ सनमान ॥

इति श्री बालकांडे द्विपंचाशत्तमः सर्गः ॥ ५२ ॥

छन्द ।

मुनि बच मुनीस बशिष्ट के सबला तबहिँ हर्षित भई ।
चित-चही सामा सबनि हित इहिँ भाँति की तहँ निरमई ॥
दधि मधु मिठाई खीर षटरस बिबिध बिंजन जे सबै ।
लाडू जलेबी पहित भात सुभाँति सिद्व किये तबै ॥

दोहा ।

मदरा तीन प्रकारकी आसव मद मैरेय ।
भरीं कनककलसान मैं जो चाहै सो लेय ॥

चौपाई ।

सुघ्रत दही दूधन बहु सरसी । भरत भई सबहुन मिलि दरसी ॥
बहु चाँदिन के थारन माहीं । व्यंजनबिबिध परस तिहिँठाहीं ॥
मन्त्री नृपति पुरोहित नारी । बिप्र गरीब धनिक इक बारी ॥
इक अच्छौहिनि दल सँग जेती । दिय जिमाइ तबहीं सब तेती ॥
करि भोजन सब तृपित भएई । तुष्ट पुष्ट उनमत्त छयेई ॥
तब सु बसिष्टहि सौं नृप भाखि । भे हम तुष्ट सकल रस चाखि ॥
अब हौं कहत सु आप सुनीजे । इक लख धेनु हमहिँ सौं लीजे ॥
ता बदलैं सुभ सबला देहू । जो यह धेनु-रतन तुव गेहू ॥

उत्तम रतन नृपति कौं चहिये । तातें देहु हमहिँ जस लहिये ॥
यौं सुनि मुनि तब बोले बानी । सु.इक लच्छकी कितिक कहानी॥
सौ करोर गोगन जौ देहौ । तदपि न मम सबला कौं पैहौ ॥
रजत पहार जुपै बहु ल्याओ । तदपि न तुम यह सबला पाओ ॥
हमहिँछोड़ि यह कहुं न रहैगी । याकी रीति कछू इमि हैगी ॥
आँगिहु तैं यह मेरी जानौ । और न दूसरि की पहिचानौ ॥
अगिन होम पूजा बल स्वाहा । औषट बषट स्वधा मख चाहा ॥
हव्य कव्य सुभ करम जु भारौ । याही तैं सब सधत हमारौ ॥
येही मम धन प्रान गनीजे । ताहि कहहु कैसैं अब दीजे ॥
यौं मुनिबच सुनि पुनिनृप बोले । सुबरन भूषन जटित अमोले ॥
अंकुस घंट सुशृङ्खल लेऊ । चौदह सहस महागज लेऊ ॥
चारिचारि सित घोड़िन वारे । आठ सुरथ सब साज सिँगारे ॥
सिँधुदेश-भव सुर हय जाए । सुदस हजार तुरग मनभाए ॥
इक करोरि गौवन की माला । सुबरन बसन सु रतन बिशाला ॥
जो कछु और चहहु सो लेऊ । यह सबला हमकौं तुम देऊ ॥
पुनिबसिष्ट कौशिकसौं कह्यऊ । हमहिँ न कछु हय गय रथ चह्यऊ ॥
मोरिहँ तौ हय गय रथ येही । जीवन प्रान निधान सनेही ॥

दोहा ।

तातें हौं नहि देहुँगो नहिं दैहौं सबलाहिं ।
तजहुँ देश बसुवास पुनि तजहुँ न क्योंहूँ याहिं ॥

इति बालकांडे त्रिपंचाशत्तमः सर्ग ॥ ५३ ॥

छन्द ।

जब देत भे न बसिष्ट तब, नृप खैंचि सबलहिँ लै चले ।
तहँ तैं छुड़ाइ सु आय मुनि पहँ ये बचन बोली भले ॥
हे मुनि पर्यौ अपराध मोसौं कौंन अस जो मुहि तज्यौ ।
तब मुनि कह्यौ हे पुत्रि तोहि न दोष कछु न कछूक ज्यौं ॥

दोहा ।

सबला तोहि तज्यौ न मैं तूँ मम प्रान समान ।
कहा करहुँ तुहि जबरई लेत नृपति बलवान ॥

चौपाई ।

इक अच्छोहिनि सेन धनी है । भुजनि विभूषित सकतिघनी है॥
छितिपति अतिजोबन मदमातौ । रहित बिबेक गजब ये सातौ ॥
ये इक इक अति अनरथकारी । हौंहि सबहि तौ कौन बिचारी ॥
हौं बलहीन सकहुं न छुड़ाई । बिपति परी यह आजुहिँ आई ॥
यौं सुनि सबला बचन उचारी । अस न कहहु मुनि बच हियहारी॥
बिप्रन तैं न सबल कहुँ छत्री । तुम्हरें अधिक सु तप बल सत्री॥
तातैं अब मुहि अज्ञा दीजे । हौं हनिहौं नृपबल लखि लीजे॥
तब मुनि कह्यहु रिपूनि हनैकौं । रच तूं तुरक तयार रनैं कौं ॥
करि हुँभार सु तब सबलाहीं । पल्हव तुरक रचे तिहिँ ठाहीं ॥
कौशिकसेन तबहिँ तिन नासी । तब रिस बिश्वामित्र प्रकाशी ॥
बाहे बान सु धनुष उठाई । पल्हव सेन सुमार भजाई ॥
तब सबला शक यवन रचेई । सुबरन सम सुभ बरन सचेई ॥
पट्टि सपरिध परसु सब धारैं । सुबरन बसन बिभूषित भारैं ॥
तिन नृप सेन बहुत संघारी । बाहि परसु असि पट्टि सभारो ॥

दोहा ।

तबहीं विश्वामित्र तहँ विविध सु आयुध बाहि ।
व्याकुल कीन्हि मलिक्षदल सब शक यवन विदाहि ॥

इति श्री बालकांडे चतुःपञ्चाशत्तमः सर्गः ॥ ५४ ॥

छन्द ।

या बिधि सुबिश्वामित्र जब शक यवन सेना सब हनी ।
बोले बसिष्ट सुधेनु सों रचु जोग सिधि सेना घनी ॥
पुनि धेनु करि हुंभाँ शबद निज अंग अंगनि तें तबै ।
कम्बोज बर्बर शक किरातक सु हारीति रचे सबै ॥

दोहा ।

तिन तुरकनि तहँ नृपति की इक अक्षौहिन सैन ।
रथ पैदल हय गयनि जुत हनी हरखि चहि चैन ॥

चौपाई ।

तब सत सुत कौशिक के जाये । सु मुनि बशिष्टहिँ मारन धाये ॥
तब मुनि कर हुङ्कार तहाँई । कीन्हि भसम सौ उनकी ताँई ॥
भौ कौशिक तब तेजबिहीना । डाढ़निरहित सरप ज्यों दीना ॥
ह्वै अति लज्जित सोचत येही । धिक जीवन मम सरम न जेही ॥
धिक जीवन जग में तिनकै हैं । व्यरथ मनोरथ जे मम से हैं ॥
धिक जीवन उनही कौ ऐसौ । सत्रु पराजित मैं अब जैसौ ॥
योंकरि कौशिक बहु निजनिन्दा । चलतभयहु इकलौ जिमिजिन्दा ॥
सौंपि सु इक सुत कों निजराजे । गौ हिमगिरि तप करिबे काजे ॥

सुतप करत तहँ शिव चलि आये । ह्वै प्रसन्न ये बचन सुनाये ॥
मांगहु नृप जो कछु बर चाही । सुनि कौशिक तब हरष उमाही ॥
करि प्रनाम भाषी यह बानी । देहु धनुर्विद्या बरदानी ॥
मन्त्र रहस्यनि सहित सुने जे । धनुरवेद बिधिवत मुहि दीजे ॥
देव दनुज गन्धर्बनि जेतीं । देहु अस्त्र विद्या सब तेतीं ॥
मुनि शिव सकल सुविद्या दीन्ही । बिश्वामित्र सुतप-बल लीन्ही ॥
सुतप तेज बल अस्त्रनि पाई । पुनि बशिष्ट पर पहुँच्यो आई ॥
मुनि आँश्रम निज अस्त्रनि बाही । नृप कौशिक दीन्यहु सब दाही ॥
तहँ के मुनि सुनि शिष्य भजाने । खग मृग गे भजि दसहु दिसाने ॥
आश्रम में इक रह्यहु न प्रानी । मुनि तब नृप सों बोले बानी ॥
रे मूरख नृप तूं अतिपापी । जाक्यो आश्रम ब्रथहिं सुरापी ॥
अब न रहहिगो तूं जगमाहीं । हौं बशिष्ट तुहि हनत यहांहीं ॥

दोहा ।

ऐसे बचन उचारि मुनि लै कराल कर दंड ।
प्रलय काल के काल सम उठत भयौ उद्दंड ॥

इति श्री बालकांडे पंचपंचाशत्तमः सर्गः ॥ ५५ ॥

छन्द ।

तब आगिनेय सुअस्त्र बिश्वामित्र लै बोलत भयौ ।
अब तूं असिष्ट बशिष्ट ठाढ़ौ रहु इतहिँ इक छिन छयौ ॥
सुनि मुनि बशिष्ट सुदण्ड लै निज हाथ यह बोले तबै ।
रे क्षत्रियाधम आपनौ बलि खोलि द्यौं नासत सबै ॥

दोहा ।

अबहिं दिखावत तोहि मैं प्रबल विप्रबल चित्र ।
यों सुनि आगिन अस्त्रको छोड्यो विश्वामित्र ॥

चौपाई ॥

सुमुनि ब्रह्मदण्डहि सौं ऐसैं । समितकियौजलअगिनहिँ जैसैं ॥
तब करि कोप नृपति निज जेते । बाहे अस्त्र सुमुनि पर तेते ॥
जे कृसाश्व सुत अस्त्र गनाये । ते सब मुनि पर नृपति चलाये ॥
जे जे नृप जब अस्त्र प्रकासे । ते मुनि निज दण्डहि सों ग्रासे ॥
लखि अदभुत मुनिदण्ड डरानौ । तब नृप ब्रह्मास्त्रहि सन्धानौ ॥
ताके त्रास जु त्रिभुवन कम्पे । तजि निज तेज दिवाकर झम्पे ॥
ताहि तबहिँ मुनि निज दंडै सों । ग्रसत भये अति परचंडै सों ॥
भौ मुनि क्रोध बिबस तब ऐसौ । घोर भयङ्कर अन्तक जैसौ ॥
मुनि कर कलित सुदण्ड प्रचंडा । भौ ज्वालनि युत उदित उदंडा ॥
मनहुं सुदण्ड यहहि जम को है । को जानहि किहिपर दमको है ॥
यहहि समुझि तब सब सुर आये । या विधि मुनिकौं बचनसुनाये ॥
निग्रह नृप कौशिक कौ भयऊ । तिहुंलोकनिअतिआनदलह्यऊ ॥
तातैं अब यह कोप तजीजे । ह्वै परसन्न सुरन सुख दीजे ॥
यौं सुनि मुनि तजि कोप तहाँई । भे बैठत तपसी की नाईं ॥
लहि विषाद नृप कौशिक त्योंहीं । भौ निन्दित छत्रिय बल कौंहीं ॥
इकहि विप्र-बलही बल साँचौ । जाकौं सहि न सकत जम आँचौ ॥
दिखहु जिते हम अस्त्र प्रकासे । ब्रह्मदण्ड इकहीं ते ग्रासे ॥

दोहा ।

तातैं हौंहूँ हौंहुँगो अब छत्रिय तैं विप्र ।
तप करि जप करि जोग करि बहु विधान करि छिप्र ॥

इति बालकांडे षटपंचाशत्तमः सर्गः ॥ ५६ ॥

छन्द ।

यह करि बिचार महीप कौशिक तबहिँ दच्छिन कौं गये ।
रानी सहित अति उग्र तप फल मूल भखि करतैं भये ॥
तहँ धर्मपथ मैं चलत नृप कैं विष्यन्दादिक तबै ।
चहु पुत्र भे त्यौंहीं तपत तप सहस वर्ष बिते जबै ॥

दोहा ।

भौ पारिपूरन तप तबै यह बोले बिधि आइ ।
राजऋषिन कौ लौक तुम जीत्यौ कौशिकराइ ॥

चौपाई ।

धनि कौशिक तुम सु तप कये हौ । राजहि तें राजर्षि भये हौ ॥
या कहि सुबिधि गये निज थानैं । सुनिकौशिक तब अतिहिँरिसानैं
भे बोलत मैं अति तप ठाने । तदपि सुरनि राजर्षि बखाने ॥
तातैं पुनि तप करिहौं ह्यांई । या कहि भे बैठत तप ताईं ॥
ताही समय विषैं इक राजा । नाम त्रिशंकु सकलगुनकाजा ॥
भौ इक्ष्वाकुहि के कुलमांहीं । तिहिँअसिकछुमतिकीन्हिमहांहीं
ऐसौ यज्ञ करहुं अब जातैं । जाहु सदेहहिँ स्वर्ग यहाँ तैं ॥
यह बिचार प्रोहित सौं कह्यऊ । मुनि बशिष्ट तब बोलत भयऊ ॥

मोसौं होइ सकत यह नाहीं । तब त्रिशंकु तजि राज तहाँहीं ॥
ताकि सुदच्छिन दिसिन्टपचल्यऊ । तहँलखिमुनिसुतसतकसुमिल्यऊ
किय प्रनाम तिन कहँ करजोरी । औ जु कहत यह न्टपति बहोरी ॥
हौं आयौ अब सरन तिहारे । हौ तुम मोहि उधारनवारे ॥
तुम्हरो सुपितु बसिष्ट जु गायौ । मोह न तिहि सो सुमख करायौ ॥
जातें स्वर्ग सदेहहि जाऊँ । हौं अति बिकल तबहिं कलपाऊँ
हौ तुम मम गुरु-सुत गुरु ठाहीं । तातें हम जाचत तुम पाहीं ॥
सुमख करहिँ हित आज्ञा दीजे । जु कछु होहि बिधि ताहिकहीजे
न्टप इच्छाकु कुलहि के माहीं । बिन प्रोहित गति दूसर नाहीं ॥

दोहा ।

तातें तुम सब करि कृपा जग्य करावहु मोहि ।
जातें सहित सरीर यह स्वर्गबास मम होहि ॥

इति श्री बालकांडे सप्तपंचाशत्तमः सर्गः ॥ ५७ ॥

छन्द ।

यों सुनि त्रिशंकु महीप-बच सुबशिष्ट-सुत बोले तबै ।
जो मख करायो नहि पितहु हम क्यों करावहिँ सो अबै ॥
इच्छाकुबंशी न्टपनि कों तजि सुगुरु गति दूजी नहीं ।
तातें न अब औरहु कराइ सकैहिगो तुहि मख महीं ॥

दोहा ।

हम न करावहिं गे तुमहि पितुबच उलँघि सुयज्ञ ।
जाहु बहुरि निज नगर कों भये फिरत कत जज्ञ ॥

चौपाई।

यों सुनि तिनसों कह्यउ त्रिशंकू। रहहु सुखी तुम तजि सब शंकू॥
हौं अब प्रोहित और करूंगो। करि मख स्वर्ग सदेह फिरूंगो॥
सुनि मुनि-पुत्रन साप दियोई। लहहु रूप चंडालहि कौ ई॥
तबहिं त्रिशंकु भयहु चंडाले। उर धारहिं हाड़न की माले॥
नील बसन तन नील ठयोई। भूरि बार भयङ्कर भौ ई॥
करनि कड़े लोहहि के जैसे। अँग अँग और बिभूषन तैसे॥
यों लहि रूप त्रिशंकुनरेशा। किय निशि में निज नगरप्रवेशा॥
अस लखि रूप सुनृप कौ घोरै। भे भाजत मन्त्री चहुँ ओरै॥
तजि पुर पुरबासी सब भाजे। नृप त्रिशंकु तब अतिहीं लाजे॥
ह्वै व्याकुल नृप चुप चलि चरनै। जाइ गह्यहु कौशिक कौ सरनै॥
लखि त्रिशंकुतन कौशिक राई। करि करुना यह बात सुनाई॥
भे चंडाल कहहु तुम कैसें। मम आश्रम आये कत ऐसें॥
तब त्रिशंकु निज गाथा गाई। सुसत्र हकीकति खोलि सुनाई॥
हौं न कबहुँ मिथ्या बच भाख्यौ। सपनिहुं पाप न उर अभिलाख्यौ॥
पाल्यौ सकल प्रजन के ताईं। धरि ध्रुव धर्म सुतन के ठाईं॥
गुरुजन मुनि सन्तुष्ट कराई। दुखित दीन दारिद्र दराई॥
सुमख बिचारत फल यह पायौ। हौंनहार नहिं मिटत मिटायौ॥
करि पौरुष पचिपचि किन मरुऊ। होत वहहि जो बिधिलिखि धरुऊ॥
नगन फिरत हर हरि अहिसाई। हौंनहारगति जाति न गाई॥
निरपराध मम मन बच काया। दीन्हिशाप मुहिं तिनतजि दाया।
तातैं तुम्हर सरनि तकि आयौ। को तुम सम दुखदरन परायौ॥

दोहा ।

यातैं कौशिक राइ अब यौं, मम हरहु कलेश ।
ह्वै प्रसन्न तप तेज बल ज्यौं तम हरत दिनेश ॥

इति श्री बालकांडे अष्टपंचाशत्तम: सर्ग: ॥ ५८ ॥

छन्द ।

यौं सुनि त्रिशंकु- कलेश कौशिक ये बचन बोले तबै ।
इक्ष्वाकुबंशी नृपति तुम तुव चरित हम जानत सबै ॥
आये जु चलि मम सरन कहँ तौ अब न काहू तें डरौ ।
हम यज्ञ करवाइहिँ तुम्हें बुलवाइ रिषि धीरज धरौ ॥

दोहा ।

जु गुरु- सुतन को साप तैं यह चंडाल- सरूप ।
सहित शरीरहि जाहुगे सुरलोकै तुम भूप ॥

चौपाई ।

मम कौशिक के सरन जु आये । सुरलोकनि जानहु तुम पाये ॥
या कहि नृप सौं कौशिकराई । पुत्रन सौं पुनि कह्यहु बुलाई ॥
सिद्धि करहु सब मख की सामा। पुनि सिष्यन सौं कह्यहु सुधामा॥
ल्यावहु सकल ऋषीन बुलाई । जो जस कहहिँ सु कहियौ आई॥
गे तब शिष्य रिषिन के ताईं । ल्याये सबनि बुलाइ तहांईं ॥
इक बशिष्ठ के सुत नहि आये । सरिस बचन तिनके सब गाये ॥
तिन यह कह्यहु जु हमहिँसुनाई। जो जस तिहिँ तैंसो मिलिजाई॥
यज्ञ करत चण्डाल जु भारी । क्षत्रिय यज्ञ- करावनवारी ॥

सुनियतुसबविधिअविधिअनैसी। कुमति सिद्ध होवहि धौं कैसी ॥
ऐसे थल सुर क्योंकरि ऐहैं । कैसैं पुनि हविभागनि लैहैं ॥
जे तहँ करि भोजन आवैंगे । ते क्यों बहुरि सुगति पावैंगे ॥
औरहु जे दुरबाद गनाये । ते कौशिक कहँ आइ सुनाये ॥
सुनि कौशिक शिष्यन की बानी। भे बोलत मैं सुतप- बिधानी ॥
दूषन इकहु न मम बिच ऐसौ। मुनिपुत्रन मिलि भाष्यौ जैसौ ॥
या कहि शाप बचन उच्चारे । सुत बशिष्ट के दुष्ट जु भारे ॥
तातैं भसमहिँ ह्वै जमलोकै । जाहिँ सबै करि सुपितु ससोकै ॥
बहुरि सात सै जनम तहांहीं । ह्वै चण्डाल रहहिँ जगमांहीं ॥
होहिँ कुरूप कुटिल तन कारे । महि मृतकन के खैंचनवारे ॥
तिनमैं एक महोदय नामा । सब मैं सुबड़ कुमति को धामा ॥
तिहिँ मोकहँ बहु दूषन दीनो। तातैं होहि वहहु मतिहीनो ॥
सकल लोकदूषित चण्डाला । निरदय जीव हननही बाला ॥

दोहा ।

जगजीवन हिंसन करत अति दुरगति कौं जाइ ।
या कहि सकल रिषीन मैं भे चुप कौशिकराइ ॥

इति श्री बालकांडे एकोनषष्टित्तमः सर्गः ॥ ५९ ॥

छन्द ।

या बिधि बसिशष्टहि के सुतन कों शाप दै कौशिक तबै ।
बोले ऋषीन सुनाइ पुनि हौं कहत सो सुनियौ सबै ॥
इच्वाकु सुभ कुल मैं त्रिशंकु सुनाम यह राजा भयौ ॥
लहि शाप निज गुरु- सुतन तैं अब आइ मम सरनैं ठयौ ॥

दोहा।

यह चाहत नृप जग्य करि स्वर्गहि जाहुँ सदेह।
तातैं मख ठानहु चहै तुम सब सहित सनेह॥

चौपाई।

या बिधि सुनि कौशिककी बानी। ऋषिन सुआपुस मैं अनुमानी॥
कौशिकबचन जु नहिँ मानैंगे। तौ ये शाप सबनि ठानैंगे॥
तातैं यज्ञ ठनहु तजि शोकै। कौशिकबल जैबी सुरलोकै॥
या कहि ऋषि तब सुमख अरम्भा। करत भये बिधिवत तजि दंभा॥
पढ़ि मनु कौशिक सुरनि बुलायौ। तहँ न अमर कोऊ चलि आयौ॥
तब मुनिउलटिस्रुवहि निजपानी। बोले यह छितिपति सौं बानी॥
लखहु त्रिशंकु सु मम तप थोकै। हौं पठवत तुम कहँ सुरलोकै॥
होइ जु कछु मम तपबल तासौं। जाहु सतनु तुम स्वर्गनिवासौं॥
तबहिँ त्रिशंकु लखत सबही कै। भे पहुंचत स्वर्गहि अति नीकै॥
निरखि त्रिशंकुहि कह्यहु सुरेसा। तू ह्यांतैं भजु अधम नरेसा॥
तैं नहिँ स्वर्ग रहन कै जोगू। तो तन बिच गुरु-साप सजोगू॥
तातैं मूढ़ स्वरग ते ऐसें। तूं पड़िहै भाषत मैं जैसें॥
ऊपर पाँव तरैं करि माथौ। अबहिँ गिरहिगो इततें साथौ॥
यों सुरपतिबच सुनत त्रिशंकू। त्यौंहीं पतित भयहु लहि संकू॥
या बिधि गिरत त्रिशंकु पुकारौ। त्राहि त्राहि मुनि मोहि सम्हारौ॥
सुनि कौशिक तब बचन उचारे। जहँ कै तहँ थिति रहहु सुखारे॥
अब न गिरहुगे नृप तुम कैंहू। तुव हित सृष्टि रचत अब मैंहू॥
या कहि रचन लगे जग दूजौ। मुनिसमान बिधि जात न कूजौ

सप्त सुऋषि दच्छिन मगमाहीं । रचत भये नभ निरषि तहाँहीं ॥
तारागन अनगन सु बनाये । जे जहँ जोग तहहिँ ते छाये ॥
पुनि बोले कौशिक न डरूँगो । औरै दूसर इन्द्र करूँगो ॥
कै पुनि इन्द्र त्रिशंकुहि ह्वैहै । सकल सुरासुर पालत रैहै ॥
या कहि रचत भयहु सुर औरै । तब सुर असुर डरपि तिहिँ ठौरै॥
भे आवत कौशिकमुनि पासै । करि प्रनाम किय बचन बिकासै॥
नृप त्रिशंकु गुरुस्रापित ये है । कहहु जाइ क्यों स्वर्ग सदेहै ॥
तब मुनि कह्यहु प्रतिज्ञा मेरी । झूठी होइ कहहु क्यों फेरी ॥
रहहिँ त्रिशंकु सदा सुरलोकै । मम कृत नखत तजैं नहिँ ओकै॥
चौदह भुवन रहहिँ जब तांईं । ममकृत सृष्टि रहहि तब तांईं ॥
तब मुनि सुरनि कह्यो बच पैहै। जो तुम कहत वहै सब ह्वैहै ॥
पर ज्योतिष चक्रहु तें न्यारे । रहहिँ सदहिँ तुव कृत सब तारे॥
तहहिँ अधोमुख नृपति त्रिशंकू। रहहि सदा सुर सम निरशंकू ॥
या कहि देव ऋषीसुर जेते । निज निज थलन गये सब तेते ॥

दोहा ।

सुनि सुरबचन विचार करि बोले विश्वामित्र ।
ज्यों कहिगे सुर त्यों रहै ममकृत सृष्टि विचित्र ॥

इति श्री बालकांडे षष्टित्तमः सर्गः ॥ ६० ॥

छन्द ।

जब गे ऋषीशुर सुर सुकौशिक बच सुसिष्यन सों कह्यौ ।
तप करत इत भौ विघ्न तातें अनत चलि चाहहुं रह्यौ ॥

यों आइ पुष्कर आदि तीरथ तीर तप करतैं भये ।
वाही समै नृप अम्बरीष सुयज्ञ ठनि औधिहि ठये ॥

दोहा ।

आइ इन्द्र हरि लै गये सुमख-अश्व छल रीति ।
तब बोले द्विज नृपति सों गौ हय तुव दुरनीति ॥

चौपाई ।

ठानि सुमखहय जौन रखावै । सो अति दोष लहहि दुख पावै ॥
तातें वहहि तुरँग तुम ल्याओ । कै इक नर दै मोल मगाओ ॥
सुनर बिसाहनि चलि भौ राजा । लै बहु धन गोधन तन ताजा ॥
फिरतर सु रिचीकहि देख्यौ । कुटुम सहित तप करत अलेख्यौ ॥
तब मुनि सों नृप कह्यहु सुयेहू । इक लख गौवनि लै सुत देहू ॥
तब मुनिकह्यहु सुबड़ सुत मोकौं । है प्रिय बेंचि न दैंहहुँ तोकौं ॥
तब मुनि नारि कह्यहु बच ऐसैं । लघु सुत प्रिय मुहि बेंचहु कैसैं ॥
यों सुनि मातु पितहु की बानी । मध्यम सुत यह बात बखानी ॥
बेंचि चुके मुहि मातु पिताहू । तातें नृप तुम मुहि लै जाहू ॥
तब नृप कोटि असरफी दीन्ही । रासैं रतनन की मुनि लीन्ही ॥

दोहा ।

दै इक लच्छ सुधेनु तब अम्बरीष हरषाइ ।
शुनःशेफ कों लै चले निज रथ मांहि चढ़ाइ ॥

इति श्री बालकांडे एकषष्टित्तमः सर्गः ॥ ६१ ॥

छन्द ।

या बिधि चलत मग अम्बरीष महीप दुपहर के समै ।
बिश्राम किय पुष्करतटहिँ तहँ शुन:शेफ महातमै ॥
तप करत बिश्वामित्र मातुल कौं निरषि तिहि गोद मै ।
ह्वै दीन जाइ गिर्‍यौ तबहिँ बोल्यौ बचन अबिनोद मै ॥

दोहा ।

बेंच्यौ मुहि पितु मातु लिय अम्बरीष नरनाथ ।
मोंसे अतिथ अनाथ की रक्षा तुम्हरे हाथ ॥

चौपाई ।

निज कारज सिधि पावहिँ राऊ । हौं जीवहुँ अस करहु उपाऊ॥
यौं सुनि दीन्ह दुखित की बानी । कौशिक करि करुना उरआनी॥
ताकौ करि सम्बोधन तैसें । निज तनयन सौं बोले ऐसें ॥
जा कारन हम तुमकौं जायौ । सो आजुहिँ वह समयो आयौ॥
या मुनि पुत्र सु आयौ सरनै । याकौ जीव बचहि सो करनै ॥
तातें तुम नृप के मखमाहीं । तोषहु अगिनि सुपशु के नाहीं॥
यौं सुनि पितु के बचन अडोले । मधुच्छन्दादि सबै सुत बोले ॥
कोऊ निज सुत मारि अनैसें । दूजे कौ सुत ज्यावत ऐसें ॥
तब करि कोप सुकौशिक भाषे । धरमछोड़ि तुम तन अभिलाषे॥
अब मम बचन उलंघे यातैं । लेहु शाप तुम सब मिल तातैं॥
मुनि बसिष्ठसुत सब भे जैसे । होहु तुमहुँ चण्डाल सुतैसे ॥
सहस बरस लगि या महि माहीं। फिरहु भ्रमत भूतन के नाहीं ॥
यौं दै शाप सुतन के ताईं । शुन:शेफ सौं कह्यौ तहाँईं ॥
सुमख जूप मै जब नृप तो है । बाँधहिगो तब सुन हित जो है॥

इन्द्रा विष्णुहि की तुति कीजै । तब तूं जियत बचहिगो छीजै ॥
या कहि मंत्र दुहुन उपदेसे । शुनःशेफ लहि मन्त्र विशेषे ॥
जाइ नृपति सौं बोलत भयऊ । चलहु बेग जहँ निजमष ठयऊ॥
यों सुनि नृप चलि बहुत उताले। पहुँच्यौ आइ सुमष की साले ॥
शुनःशेफ कहँ तहँ पहिराये । लाल बसन त्यों तिलक लगाये॥
यज्ञजूप महँ बाँधत भेई । शुनःसेफ तब मन्त्र पढ़ेई ॥
ह्वै प्रसन्न सुरपति तहँ आये । शुनःशेफ कौं ज़ियत छुड़ाये ॥
इन्द्र अनुग्रह तें यह आयौ । करि मख पूरन नृप कहँ ल्यायौ॥
अम्बरीष या विधि मख कीनौ । बिश्वामित्र भयहु तपहीनौ ॥

दोहा ।

कियहु कोप जो सुतन पै तातें भौ तप छीन ।
यों सुनि कौसिक सहस सम तहँहिं फेर तप कीन ॥

इति श्री बालकांडे द्विषष्टित्तमः सर्गः ॥ ६२ ॥

छन्द ।

यों तप करत तहँ कौशिकहि इक सहस वर्ष गये जबै ।
भौ तप समापत आइ विधि ये बचन बोलत भे तबै ॥
अब सुनहु बिश्वामित्र तुम अपनै सुतप सौं ऋषि भये ।
या कहि बिरंचि गये सुमुनि पुनि सुतपचरजा मै ठये ॥

दोहा ।

यों तप करतहिं इक समै तहँहि मैनका नाम ।
आई स्नान सुपुष्करै सुभग अपसरा बाम ॥

चौपाई।

तिहिँलखिकामबिबसमुनिकह्यऊ। तोहिनिरखिमैअतिसुखलह्यऊ॥
तातैं तूं मम आश्रम माहीं । करु निज बास प्रियहि कै नाहीं॥
सुनि सुरगनिका तहँहि जु छाई । भे तपहीन तबहिँ मुनिराई ॥
यों सुख करत बरस दस बीते । भे मुनि तब चिन्ता भयभीते ॥
सुरन कियो तप भङ्ग हमारी । भेजि सुगनिकहि मोहि बिगारी॥
यहहि समुझि तजि ताहि तहांईं। गे उत्तर दिशि तप के ताँईं ॥
तहँ कौशिकी जु सरित सुहाई । तहँ तप करत भये मुनिराई ॥
काम क्रोध मोहादि जितैं कौं । किय साधन बहु सुनिज हितैंकौं॥
यों हजार संवत तप कीनौ । सुरगन तबहिँ भयहु भयभीनौ ॥
सुरन कह्यौ बिधि सों निजभावै। कहहु महर्षि सुकौशिक रावै ॥
तब बिरंचि यह बानि सुनाई । भे महर्षि तुम तप बल पाई ॥
तब कौशिकबिधिसोंयहकह्यऊ। मै महर्षि तब कर जो भयऊ ॥
मोहि कोहि कामादि समेता । भयहु किनहिँ इन्द्रन कौ जेता ॥
तबबिधिकह्यउसुनहुमुनिसाँईं। भे न जितिन्द्रिय तुम अब ताँईं॥
या कहि बिधि भे जात सुथानै। तब कौशिक पुनि यो तप ठानै ॥
वायु भषत उरध भुज कीन्हें । ग्रीषम पंचअगिन ब्रत लीन्हें ॥
पावस परषि रहे उघरारैं । सिसिर समै बसि नीर मझारैं ॥
यों तप करत सहस सम गेईं। तब सब सुर संतपित भयेईं ॥

दोहा।

रंभा नाम जु अपसरा ताहैं इन्द्र बुलाइ।
कंहत भए तब दीन परि ऐसे बचन सुनाइ।

इति श्री बालकांडे त्रिषष्टित्तमः सर्गः॥ ६३॥

छन्द ।

रम्भा सु मम सन्ताप लखि अब काज देवन को दुहै ।
तूं मोहि कौशिक की मनहिँ तपभङ्ग करु जो मुहि चहै ॥
रम्भहिँ कह्यो तब सुनि सुरेश मुनीश वह तपसी महा ।
करि कोप दैहै शाप मुहि किहिँ भाँति जाँउ कहो तहाँ ॥

दोहा ।

कह्यो इन्द्र तू डरै मति मैं करिहौं जु सहाइ ।
व्है कोकिल लै सँग मदन रितु बसन्त दरसाइ ॥

चौपाई ।

चलि रम्भा तब मुनि ढिग आई । इन्द्रहु कोकिल की धुनि छाई ॥
पंच सरनि गहि मदन जु ठयऊ । ऋतुबसन्त चहुंदिशि छितिछयऊ
निरखि सुकौशिक बात बिचारी । इन्द्रकरम यह मम तपहारी ॥
तबहि कोपि दिय शाप सुरंभे । हो तूं अबहिँ पषान सदंभै ॥
दस हजार संवत लौं योंही । ह्वै पाषान परी रहु त्योंही ॥
वहिँ आइ इक बिप्र जु कोही । तुरत उधारहिगो मुनि तोही ॥
होइ पाषान रही जब रम्भा । भाज्यहु इन्द्र सुमान अचम्भा ॥
तब कौशिकमुनिहीं मन कह्यऊ । क्रोधहिँसों पुनि मम तपदह्यऊ ॥
अब न भूलि कहुं क्रोध करूंगो । निजस्वासहि जित मौन रहूंगो ॥
जीति सुमन बहु बरषन ताँईं । करिहौं बहुरि सुतप सुभ ठाँईं ॥

दोहा ।

यों लै कौशिक नियम सब तजि रस रोस विकल्प ।
सहस वर्ष तप करहि को तहँ कीन्हो संकल्प ॥

इति श्री बालकांडे चतुःषष्टितमः सर्गः ॥ ६४ ॥

छन्द।

तब छाड़ि बिश्वामित्र उत्तर दिशहि पूरब कौं गये ।
तहँ कीन्ह वर्ष हजार तप धरि मौन काठहि से ठये ॥
देवन उठाये बिघ्नहूं बहु तदपि कोप नहीं कियौ ।
करि तप समापत पारनै हित ग्रास जो कर मे लियौ ॥

दोहा।

तबहि इन्द्र द्विजरूप धरि भोजन जाँचे आइ ।
दिय मुनि सिद्ध जु भषहु तौ गौ सुरेस सब खाइ ॥

चौपाई।

तब मुनि बिन भोजन तप माहीं। भे बैठत सम सहस तहाँहीं ॥
करि सुमौन जब स्वास चढ़ायौ । उथ्यहु धूम सिर तें नभ छायौ॥
तातें लोक तिहुन के बासौ । देव पितर गन्धर्बबिलासी ॥
ऋषि रच्छस अहि मानव जेते । भे व्याकुल थल थल सब तेते ॥
मुनि तपतेज न तेज बिहीनैं । भे भाषत बिधि सौं सब दीनै॥
इक मुनि तपतेजहि के मारे । हम सब जात जरे बिनु जारे॥
मुनितप बिच बहु बिघन उठाये। तदपि न काम सुरिस बस आये॥
अब केवल तप रूप मुनी है । रह्यहु न पातक अंस हुनी है ॥
मुनि कौ जु कछु मनोरथ होई । करहु अबहिँ परिपूरन सोई ॥
तौ तिहुंलोक बिनासन पैहैं । नाहीं तौ सब भस्महिँ ह्वैहैं ॥
मुनितेजन सब तेज बिहीनै । उदरिउदरि गिरिपरत जु पीनै॥
सूखत सिंधु बिकल जलचारी । थकित पवन कंपत भुयँ भारी॥
देखि परत दिसि बिदिसहु नाहीं। तपत न रबि तजि तेज तहाँहीं॥

जप तप यज्ञ ऋषीन तजे हैं । ह्वै व्याकुल सब फिरत भजे हैं॥
जो मागहि मुनि सुरपतिलोकै । तौ तुम देउ न कोऊ रोकै ॥
यौं सुनि बिधि देवन की बानी । आये सुरनिसहित मुनि-थानी॥
तब बिधि यहकौशिकसौं कह्यऊ। हे ब्रह्मर्षि बड़ौ तप ठयऊ ॥
तुम तप कर मुहि कीन्ह प्रसन्यै । भे तपबल तुम बिप्र सुधन्यै ॥
दीरघ आयु लहहु कल्यानै । अब तुम उठहु कहहु सो ठानै॥
ब्रह्मा की सुनि बानि सुहाई । करि प्रनाम भाष्यहु मुनिराई ॥
जो मैं बिप्र भयहु तुव ध्यारी । तौ मुहि वेद मिलहिँ जे चारी॥
धनुरवेद क्षत्रिन कौ जो है । सो अब आइ मिलहि पुनि मोहै॥
पुनि बशिष्ट इत आइ सुबानी । मोहि कहहिँ ब्रह्मर्षि बखानी ॥
तब सुर जाइ बशिष्टहिँ ल्याये । आइ बशिष्ट सुबोल सुनाये ॥
हौ ब्रह्मर्षि मिलहु मुहि आई । सब अधिकार सुसिधि तुम पाई॥
तबहिँ बिरंचि गये निज थानै । बिश्वामित्र हियहि हरखानै ॥
मुनि बशिष्ट कौ पूजन कीन्ही । यौं कौशिक द्विजवरपद लीन्ही॥
हे रघुबर ये कौशिक ऐसे । धरमधुरन्धर तपकर तैसे ॥
सतानन्द यौं कहि चुप रह्यऊ । जनक नृपति तब बोलत भयऊ॥
हे ब्रह्मर्षि सुनहु मम बानी । कीन्ह अनुग्रह निजजन जानी॥
जो तुम मम मख देखन आये । दशरथराजकुमारन ल्याये ॥
मुनि तुव कीरति परमपुनीता । तृपित होत नहिँ मम मन रीता॥
होम-समय अबहीं यह आयौ । लखहु अरक अस्ताचल छायौ ॥
देहु अनुज्ञहि तौ मैं जैहौं । पुनि प्रभात दरशन कौं ऐहौं ॥
सुनि मुनि नृप कहँ अज्ञा दीन्ही । जाइ जनक निजमख बिधिकीन्ही

दोहा ।

तबहिं सु विश्वामित्र मुनि तन मन पाइ हुलास ।
राम लषन मुनिगनन जुत करत भये तहँ बास ॥

इति श्री बालकांडे पंचषष्टितमः सर्गः ॥ ६५ ॥

छन्द ।

पुनि होत प्रात सु होम करि नृप जनक आइ मिले तबै ।
मुनि कौशिकादि सु राम लछमन सहित सनमाने सबै ॥
कर जोर नृप मुनि सौं कह्यहु अब जो कहहु सो हम करैं ।
तब कहत भे मुनिराइ कौशिक जनक सौं हित हिय धरैं ॥

दोहा ।

धनुष दिखावहु नृपसुतन ए लहि जाइ सुगेह ।
सु सुन धनुष की जो कथा बोले जनक बिदेह ॥

चौपाई ।

एक समय मष दच्छ कियौई । सुरन भाग शिव कौं न दियौई ॥
तब शिव लै निज धनुष सुहायौ । सकल देवगन मारि भगायौ ॥
पुनि शिव इहहि कह्यौ रुष रातैं । दियहु न मोहिं मष भाग सु यातैं ॥
धनुषहि सौं तुम सबन हनूगौं । पुन्य पाप अब कछु न गनूगौं ॥
सुनि शिवबचन सबै सुर डोले । परि पाइन हर सौं यह बोले ॥
निज मषभाग भलौ यह लीजे । संहारक यह धनुष तजीजे ॥
तब शिव मम पुरुषन ढिग आये । देवरात जे निमिसुत गाये ॥
तिनकौं धनुष धरोहर कैकैं । भे सौंपत अति परसन ह्वैकै ॥

तातैं शम्भुसरासन सोऊ । निमि-कुल मै पूजत सब कोऊ ॥
खोदत महि हल सौं मखकाजैं । निकसी धरनिसुता सुख साजैं ॥
सो सीता वह मम कन्या है । ताहित इकहि प्रतिज्ञा या है ॥
जो कोऊ शिवधनुष चढ़ावै । सो बिवाह सीतहिँ लै जावै ॥
तादिन तैं नृप बहुतक आये । जाँचन मम कन्याहि सुहाये ॥
निजपन मैं तिन सबन सुनायौ । ता पीछैं पुनि धनुष दिखायौ ॥
ते नृप निज-भुजबल करि हारे । धनुष उठ्यौ न उठै पग भारे ॥
हौं तब जान पराक्रमहीनैं । ते दै ज्वाब बिदा करि दीनैं ॥
तिन सब राजन मिलि पुर मेरौ । एक बरष भरि भरि भरि घेरौ ॥
तब पुर बिचन घटी सब सामा । कीन्हि सु तप तब मैं निज धामा ॥
तप करि सुरन प्रसन्न कियौई । तिन मोहिँ दल चतुरङ्ग दियौई ॥
तातैं ते सब मारि चलाये । वहहि धनुष ए देखन आये ॥

दोहा ।

दशरथनंद चढ़ाइहैं जो शिवधनुष उठाइ ।
तौ मैं सीतहिं देहुँगो निजपन पूरन पाइ ॥

इति श्री बालकांडे षटषष्टितमः सर्गः ॥ ६६ ॥

छन्द ।

यौं सुनि जनक कौ बचन मुनि पुनि बचन भाख्यौ चितचह्यौ ।
रामहिँ दिखावहु धनुष वह तब नृपति मंत्रिन सौं कह्यौ ॥
तब सकल मंत्री नगर तैं शिवधनुष यौं ल्यावत भए ।
नरमल्ल पंच हजार सौं खिचवाइ अति श्रम सौं कये ॥

दोहा ।

रतनजटित मंजूस तिहिं लगे आठही चाक ।
तिहि बिच हर को धनुष वह धस्यो जु नाम पिनाक ॥

चौपाई ।

ल्याइ धनुष तब मंत्रिन कह्यऊ । आयहु चाप जु नृप तुम चह्यऊ ॥
तहँ नृप मुनि कह बानि सुनाई । आयहु धनुष लखहिँ रघुराई ॥
इहहि धनुष कह निशिचर देवा । असुर गँधर्व किनर सुर भेवा ॥
ते सब आइ उठाइ थकेई । कोऊ त्यौं न चढ़ाइ सकेई ॥
तौलि सकै न कितिक धौं भारी । कैंहूं याहि न कर गहि झारी ॥
कीन्ह सगुन न कशिस भर तानी । तब नर की कह बात बखानी ॥
सुनि मुनि बचन जनक के ऐसी । भे बोलत रघुपति सौं तैसी ॥
देखहु राम धनुष यह जाई । खोलि मँजूस लखहु रघुराई ॥
निरखि धनुष बोले कर छ्वाऊँ । पुनि उठाय तौलहुँ गुनठाऊँ ॥
अबहिँ चढ़ाय कहहु तौ तानौं । तब नृप कह्यउ करहु जो जानौ ॥
रघुवर तबहिँ सबन के आगैं । धनुष उठाय लियौ तिहि जागैं ॥
जोरि पनच कर जोरि चढ़ायौ । पुनि खैंच्यहु तब अचरज छायौ ॥
खैंचत धनुष दु टूक भयौई । कड़कि बज्र जनु टूट पखौई ॥
घोर शबद वह दिसि २ छायौ । फोटे गिरि महि कम्प उठायौ ॥
सुनत शबद नर नभचर जेते । गिरि गिरि परत भये सब तेते ॥
राम लखन मुनि जनक समेता । ये चारहु तहँ रहिउ सचेता ॥
जोरि सुकर नृप मुनि सौं कह्यऊ । लखहु रामबल अद्भुत यहऊ ॥
अति अचिन्त्य अवितर्कित ऐसौ । है न कहूं भुजबल इन कैसौ ॥
अब मैं सियहिँ दई श्रीरामै । कीन्हि सत्य इन मम पन बामै ॥

तातैं भेजि अवधि हलकारे । बुलवावहु दशरथ नृप भारे ॥
सियबिबाह राघव की लीला । कहि भेजहु आवहिँ स-कबीला॥

दोहा।

तब मुनिआज्ञा पाइ नृप भेजि सु हलकारान ।
बुलवावत भे हिय हरषि दशरथ कौ निज थान॥

इति श्री बालकांडे सप्तषष्टितमः सर्गः ॥ ६७ ॥

छन्द ।

तब जनकपुर तें चार चलि दिन चार मै अवधहिँ गये ।
करि जोरि नृप दशरत्थ सों मिलि बिनति यह करते भये ॥
नृप जनक कुशल सुआप की सुभ बूझि भेजी है सबै ।
पुनि सुमुनि कौशिक के कहैं नृप कह्यउ सो सुनिये अबै ॥

दोहा ।

मैं पन इक या बिधि कियौ लहि कन्या सीताहि ।
जो हरधनुष चढ़ाइहै ताहि देहुँगो ब्याहि ॥

चौपाई ।

यों मम पन सुनि बहु नृप आये । धनुष उठावनहित बल छाये ॥
धनुष उठ्यौ न तबहिँ ते कोपे । हौं लरि भिरि तिनके मद लोपे॥
तापर चलि कौशिक इत आये । लै सँग राम लखन मनभाये ॥
सो वह धनु श्रीराम चढ़ायौ । करि दो टूक जगत जस छायौ॥
तातैं रामहिँ कौं अब सीता । हौं देहुं जो जगतपुनीता ॥
ताहित यह करि बिनति पठाई। चलहु आप अब सुदिन सुधाई॥

लै प्रोहित सँग साज बराती । ल्यावहु रामहिँ व्याह सुभाती ॥
यों सुनि हलकारन की बातैं । भे दशरथ अति हरषितगातैं ॥
दशरथ तबहिँ बशिष्ठ बुलाये । बामदेव प्रोहित हितक्राये ॥
तिनहिँ हकीकति नृपति सुनाई। जा विधि जनक कहाइ पठाई॥
यों आई अब राम सगाई । तुमहिँ रुचहि तौ कीजे जाई ॥
सुनत पुरोहित अति हरखाने । अति उत्तम ये बचन बखाने ॥

दोहा ।

हे नृप यह कारज करौ हमरै यहै सलाह ।
सुनि दशरथ सब सों कह्यौ यौं अब रामविवाह ॥

इति श्री बालकांडे अष्टषष्टितमः सर्गः ॥ ६८ ॥

छन्द ।

तब नृपति दशरथ होत प्रात सुमंत्र सौं बोले भलैं ।
तुम कहहु कोषाधिपन सौं बहु बसन मनि धन लै चलैं॥
अरु करहु सज्जित सेन सब गजरथ तुरंग सु नालकी ।
चढ़ि चलहिं आगे मुनि बशिष्ठादिक सबै मुनि पालकी ॥

दोहा ।

बामदेव कश्यप सु रिषि सु मुनि मारकण्डेय ।
कात्यायन जाबालि पुनि चलहिं बेग सब पेय ॥

चौपाई ।

यौं दशरथ करि मुनिगन आगे । चलत भये अति आनँदपागे ॥
सेन सहित दिन चारिक माहीं । पहुँचे मैथिल देश तहाँहीं ॥
जनक सुनेहु दशरथ नृप आये । चलि मिलाप हित आगे आये ॥

मिलत भये नृप दोऊ आछैं । हरषि जनक बोले ता पाछैं ॥
आवहु नृप दशरथ जगजागे । मुहिँ सनाथ किय मिलि उर लागे॥
हि बशिष्ठ मुनिगन जुत आओ । होत प्रभातहिँ व्याह कराओ ॥
मम मख आज समापत ह्वैहै । भोर विवाह-मुहूरत ऐहै ॥
यों सुनि नृपति जनक की बानी। तब दशरथ यह बात बखानी ॥
दान करब दातहिँ के हाथै । यौं सब कहत धरम की गाथै ॥
यातैं जु तुम कहहु सो ह्वैहै । को नृप बचन उलंघ सकै है ॥
या कहि दशरथ बसत भएई । लै सिख जनक सु मखहिँ गएई॥

दोहा।

करि मष पूरन जनक नृप सिय-बिवाह के काज ।
सामा सिद्ध करैं लगे लै सँग सकल समाज ॥

इति श्री बालकांडे एकोनसप्ततितमः सर्गः॥ ६९ ॥

छन्द।

नृप जनक प्रातहिँ होम कर बोले सतानँद सों यहै ।
सङ्काश्य नामक नगर इक इच्छा नदी तट पर अहै ॥
भूपति कुसध्वज भ्रात मम तहँ बसत ताहिँ बुलावहू ।
तब सतानन्द सवार भेजि कह्यो तिनहिँ तुम ल्यावहू ॥

दोहा।

ल्याये भूप कुसध्वजहि ते सवार तहँ जाइ ।
सु मिल भ्रात दोऊ ठये सिंघासन पै आइ ॥

चौपाई ।

निज मन्त्री तब जनक बुलायौ । हियहिँ हरषि यह बोल सुनायौ ॥
तुम डेरन दशरथ के जाउ । पुत्रन सहित नृपति कौं ल्याउ ॥
नृप मन्त्री पुरहित मुनि जेते । आवहिँ नृप दशरथ सँग ते ते ॥
गौ मन्त्री जहँ दशरथराई । करि प्रनाम यह बानि सुनाई ॥
अवधनाथ मम बिनति सुनीजे । चल अब दरस जनक कौं दीजे ॥
सुनि दशरथ नृप तहँ चलि आये । मिलि जनकहिँ ए बचन सुनाये ॥
मम कुलपूज्य पुरोहित ऐसे । हैं बशिष्ठ मुनि सुरगुरु जैसे ॥
मम बंसावलि सुनहुँ बिदेही । ये भाषहिँ कौशिक मत एही ॥

छन्द—रोला ।

तबहिँ बशिष्ठ उचार उठे नृप साखोचारै ।
मूल पुरुष बिधि प्रथम लसत जिनकैं मुख चारै ॥
ब्रह्मातनय मरीच सु तिन तैं कश्यप जानौ ।
कश्यप के भे भानु भानु के मनु पहिचानौ ॥
वैवस्वत मनु तनय नृपति इक्ष्वाकु सुहाये ।
जिन रचि नगरी अवध सबै बिधि लोग बसाये ॥
इक्ष्वाकुहि कें कुक्षि कुक्षि के तनय बिकुक्षै ।
तिनके बान सुबान तनय अनरन्य जु सुक्षै ॥
तिनके पृथु पृथु के त्रिसंकु तिनके सुत जानौ ।
धुन्धमार ता तनय नृपति युवनाश्व बखानौ ॥
युवनाश्वहि के तनय भये महिपत मन्धाता ।
तिनके तनय सुसन्धि सन्धि-सुत भे जुग भ्राता ॥
लघु प्रसेनजित नाम बड़े ध्रुवसन्धि गनाये ।

भुवसन्धिहु के भरत भरत के असित सुहाये ॥
असित भूप सौं लरहिँ तीन तब अरि चढ़ि आये ।
तालजंघ ससिबिन्दु नृपति हय हय बल छाये ॥
तिन सब सौं करि जुद्ध रह्यौ जब बल न लरैं कौं ।
द्वै रानिन जुत गये हिमञ्चल सुत पकरैं कौं ॥
दा तबहिँ करत नृप भये कालबस ज्यौं मुनि ज्ञानी ।
गरभ धरैं तहँ रहीं हुती जे दोनों रानी ॥
इक रानी बिष दीन तहां दूसर के ताँईं ।
गरभ मरहिँ के हेत हुते मुनि च्यवन तहाँईं ॥
सो वह रानी च्यवन पास चल कीन्ह प्रनामै ।
समुझि गये मुनि तबहिँ चहत यह सुत अभिरामै ॥
बोले मुनि सुन राजपत्नि तेरैं सुत ह्वैहै ।
गर लीन्है कर सगर नाम तातैं सो पैहै ॥
या बिधि भे नृप सगर सगर के सुत असमंजै ।
असमंज्यहु के अंसमान लहि ओज अभंजै ॥
अंसमान के सुत दिलीप ते जग मैं गाये ।
तासु भगीरथतनय भूमि जे गंगहि ल्याये ॥
तिनके तनय ककुस्थ ककुस्थहु के रघुनामा ।
रघु के सुत सौदास तासु संघन अभिरामा ॥
सोभित संघनतनय सुदर्शन नाम नरेसू ।
अग्निवर्नसुत तासु सुतिनके शीघ्रगवेसू ॥
तिनके मरु मरुतनय प्रसुश्रुक नाम जु भेई ।
अम्बरीषसुत तासु तिनहुं नृप नहुख लहेई ॥

तिनके तनय जजाति तासु नाभाग बखानी ।
तिनके अज अजतनय भूप दशरत्थहिँ जानी ॥
दशरथसुत श्रीराम सुलच्छन दोऊ आये ।
दुहू सुता तुम देहु इनहिँ भो जनक सुहाये ॥

दोहा ।

सदा शुद्ध निमिवंश ज्यौं त्यौंही सूरजबंश ।
ज्यौं दशरथ त्यौं तुम जनक पावन परम प्रसंश ॥

इति श्री बालकांडे सप्ततितमः सर्गः ॥७०॥

छन्द ।

यौं सुनि बशिष्टहि के सुमुख तें बंश बर्नन भान को ।
राजा जनक भाषत भये सुभ सोमबंश प्रमान को ॥
प्रथमहिँ सुकन्यादान मैं निज बंश बर्नन उचित है ।
तातें कहत हौं सुनहु सब निमिबंश जो जग रुचित है ॥

दोहा ।

महाराज निमि प्रथम भे तिनके सुत मिथिभूप ।
तिन मिथलानगरी रची मैथिल देश अनूप ॥

छन्द रोला ।

मिथि के तनय प्रसिद्ध भये जग जनक बड़ेई ।
तासु उदाबसु तनय नन्दवर्धन तिनकेई ॥
तिनके तनय सुकेतु सुकेतहु के सुत भाये ।
देवरात ता तनय ब्रहद्रथ नाम गनाये ॥

महाबीर ता तनय सुतिनकी सुधृत बखानै ।
सुधृतहु के हर्यश्व भये जे जग के जानै ॥
तासु प्रबीधकतनय तासु कीरति रथ नामा ।
देवमीठ ता तनय बिबुधि तिनकी अभिरामा ॥
तिनकी तनय महीध्र सुतिनकी कीरत राजू ।
महारोम ता तनय स्वर्णरोमहिँ तिन साजू ॥
स्वर्णरोम की तनयहु स्वरोमेहि पहिचानी ।
तिनकी जेठे पुत्र जनक हम हैं सो जानौ ॥
लखहु कुसुध्वज नाम हमारे भाई छोटे ।
दुहुन छोड़ि मम पिता गये तप करन अखोटे ॥
तिन तप करतहिँ तहाँ बपुख निज त्याग दियोई ।
मै लहि यह लघुभ्रात धर्म सों राज कियोई ॥
तबहिँ सुधन्वा नाम नृपति साँकस्यपुरी को ।
घेरि नगर मम सकल कह्यो तिहिँ बचन सु ही को॥
शंभु धनुष अरु सियहि हमै तुम अब दै डारो ।
तब मैं करि अति युद्ध सुधन्वा भूप सँघारो ॥
तब तैं ताकी राज कुसध्वजही बैठारे ।
हैं हम जेठे जनक कुसध्वजं अनुज हमारे ॥
रामचन्द्र कौं सिया उर्मिला लछमनही कौं ।
बाकदान कर दई सुता है लहि सु घरी कौं ॥
तीन बार त्यों बचनदान के जनक उचारे ।
पुनि बशिष्ट सों कह्यउ सुनहु मुनिबचन हमारे ॥

दोहा ।

करवावहु तव राम अरु लक्ष्मन कौं सुभ थान ।
परौ उत्तरा नखत में करिहौं कन्यादान ॥

इति श्री बालकांडे एक सप्ततितमः सर्गः ॥ ७१ ॥

छन्द ।

यों सुनि जनक के बचन बिश्वामित्र सुमुनि बशिष्ठ हू ।
भे कहत भूप विदेह सों तुम सौ न कोऊ सिष्टहू ॥
इक्ष्वाककुल निमिकुल सरिस कहुँ और कौ कुल है नहीं ।
जहँ पाइयत कुल एक सी सम्बन्ध करियत है तहीं ॥

दोहा ।

राम लषन कौं दै चुके हौ कन्या तुम राइ ।
और बचन इक हम कहत सो सुनिये सुख पाइ ॥

चौपाई ।

अनुज कुसुध्वज की है कन्या । देहु भरत शत्रुघ्नहिँ धन्या ॥
दशरथसुत इत चारिहु आये । लोकपाल सम जग मन भाये ॥
तुम समान को है अब दाता । हे नृप जनक जगत जन त्राता॥
सु मुनि दुहुन के सुन बच ऐसे । बोले बचन जनक पुनि तैसे ॥
हमहुँ धन्य कुल धन्य हमारो । जहँ तुमसे मुनि उचित उचारो॥
जो तुम आइस कीन्ह सु ह्वैहै । मो चितचाह हुती पुनि यै है ॥
या कहि दान बचन पुनि भाषे । जनकन्टपति अतिहित अभिलाषे॥
अनुज कुसध्वज कन्या दोऊ । दई भरत शत्रुघ्नहिँ सोऊ ॥

कन्यादान दियहि कै काजैं । वरन करे दशरथसुत राजैं ॥
तीजे दिवस सुचारिहु कन्या । दैहौं व्याह चहुन कौं धन्या ॥
परसों नखत उत्तरा ऐहै । इक सँग व्याह सबन को ह्वैहै॥
यों कहि जनक उमगि अभिलाषे। पुनि वशिष्ठ कौशिक सों भाषे॥
धरमकाज यह तुम बड़ कीन्हौ। मोकह निजशिष्यहि सम चीन्हौ॥
अवध नगर मैथिलपुर माहीं । अब भय भेद रह्यउ कछु नाहीं॥
जिमि तुमकहहुकरहिँहमत्योहीं। सुनि दशरथ बोले तब योंही ॥
धन्य जनक तुम दोउ भाई । पूजत जिनहिँ सकल ऋषिराई॥
कहहु जु हम निजडेरन जावैं । नान्दी श्राद्ध करहिँ सुख छावैं॥
तुम नित लहहु अनन्द बधाये । या कहि दशरथ डेरन आये ॥
नान्दीमुख तहँ कीन्ह सराधू । पूजि सुप्रोहित गुरु मुनि साधू॥
प्रातहिँ बहु गोदान कराये । इक इक लाख सु बिप्रन पाये॥

दोहा ।

बिधिवत चारयो सुतन सों यों गोदान दिवाइ ।
ध्यावत भे धन द्विजन कौं दशरथ हिय हरषाइ ॥

इति श्री बालकांडे द्विसप्ततितमः सर्गः ॥ ७२ ॥

छन्द ।

जा दिन करायो सुतन कौ गौदान ब्रत भूपति तबै ।
आये भरत मातुल युधाजित तिनहिँ लखि हर्षे सबै ॥
तहँ तबहिँ कैकय राजसुत मिलि दशरथहि बोल्यौ यहै ।
ममपित बहुत दिन तें सुदौहित भरत कौं देख्यौ चहै ॥

दोहा।

आयौ भरत लिवायवैं जबहि अवधि के मांहि।
सुनत भयो तहँ यह खबरि गे दशरथ मिथिलाहिं॥

चौपाई।

सुनि बिबाह निजभाने जन कौ। हौं आयहु देखन निजमन कौ॥
नृप सुनि बचन युधाजित ठाने। निजहित जान बहुत सनमाने॥
यों दशरथ बस रात बिताई। परषि प्रात सँग लै मुनिराई॥
सुतनसहित आये मखशाले। सुदिन महूरत लखि सुविशाले॥
तहँ बशिष्ट कंकनगुन कीन्हौं। बाँधि चहुन के हाथन दीन्हौं॥
गे बशिष्ट पुनि जनक समीपै। उचरे बचन सुनाइ महीपै॥
सुकरि मंगलाचारि सुहाये। पुत्रन के दशरथ मन भाये॥
मग हेरत अब कब धौं दानी। दैहै दान बुलाइ सुबानी॥
यों सुनि मुनिबच जनक कह्योई। हौं तुम्हरी मग हेर रह्यौई॥
कन्यन कर कङ्कन कै डोरे। बाँधि चुक्यहु मंगल रँग बोरे॥
हौं बैठ्यहु बेदी ढिग त्यौंहीं। अब न बिलम्ब करहु मुनि यौंहीं॥
तब दशरथ कौं मुनि लै आये। पुत्रनसहित सबन सुखपाये॥
बोल्यौ तबहिं जनक अवनीशा। व्याह करावहु तुमहिं मुनीशा॥
तब बशिष्ट कौशिक मिलि दोऊ। मण्डप बिच रचि बेदी सोऊ॥
गन्ध पहुप धर बेदी छाजी। अंकुर अरपन की बिधि साजी॥
जौ सुबरन सरवन बिच बोये। बिधिवत करि पूजन जल मोये॥
संव सहित धूमन के डाबा। अमल अरघ भाजन छबि छावा॥
भरि भाजन धानन की खीलैं। शुक शुभ दरभ सम्हारि सुडीलैं॥

सुभ अच्छत हरदी रँग रंगे । सामग्री करि सिद्ध उमंगे ॥
इक सम दरभ समूह सुहाये । सु अगिन के चहुँओर बिछाये ॥
होम बशिष्ठ सुकरत भयेई । लै सीतहिँ तहँ जनक ठयेई ॥
अगिन साखि कर जनकविदेही। बोले बचन राम सौं एही ॥
अवनिसुता सीता मम प्रानै । धरम आचरन तुम सँग ठानै ॥
निजकर करहु जु पानिग्रहनै । याहि सदहिँ तुम्हरे सँग रहनैं ॥
यौं कहि नृप कर मन्त्र उचारा। भे छोड़त निर्मल जलधारा ॥
या कहिजनकसियहिँतिहिँठाईं। दिय बिधिवत रामहिँ के ताईं ॥
साधु साधु कर देव उचारे । बरसत सुमन सुमनतरु वारे ॥
पुनि नभ दुन्दुभि दिव्य बजाये। घरघर अति आनद गन छाये ॥
या बिधि और जु तीनहुँ कन्या। दीन्ही जनक तिहुंन कौं धन्या ॥
दीन्हि उर्मिला लछमन कौंहीं । अरपि मांडवी भरतहि त्यौंहीं॥
श्रुति कीरत शत्रुघ्नहिँ दीन्हीं । यौं नृपजनकबिहितबिधिकीन्हीं॥
पुनि निज २ बेदिन बर आये । बधुनि सहित अतिहीं मनभाये॥
करि अगिनिहि परिकरमाछाये। बिधिवत ब्याह मुनीन कराये ॥
भे बाजत नभ बिबुध नगारे । गावत सब गन्धरब सुखारे ॥
नाची गति गन्धरबी जेतीं । बीन मृदङ्ग बजाय सु तेतीं ॥

दोहा।

यौं नृप दशरथ सुतन के सुबिधि ब्याह करवाइ।
प्रोहित मुनि मंत्रीन जुत डेरन पहुँचे आइ ॥

इति श्री बालकांडे त्रिसप्ततितमः सर्गः ॥ ७३ ॥

छन्द ।

ले सीष कौशिक नृपति सों तप करन हिमगिरि कों गये ।
तब जनक नृप सों सीष दशरथ अवध कों मागत भये ॥
तहँ जनक दायज मैं सु कैयक लाख गौवन देत भे ।
हय गय बिभूषित रथ दुसाले बसन बहु नृप लेत भे ॥

दोहा ।

इक इक कन्यन कों दई सौ सौ सखीं नरेश ।
इक इक सुभग सखीन कों सौ सौ दासी बेश ॥

चौपाई ।

अमल अमोलिक रतन अपारे । भरि भरि बहु सुवरन के थारे ॥
दै नृप मैथिल बचन उचारे । निज करजोर विनय जुत भारे ॥
हे दशरथ तुम अवधि नरेशा । सारव भौमि अवनि अमरेशा ॥
तुमहिँ बुलाइ सु हम यह कीन्हौं । दिनचारिक श्रम तुमकहँ दीन्हौं ॥
हमसौं कछु न करत बनिआयौ । शुभ सेवन आदर मन भायौ ॥
छमियौ मम यह नृपति ढिठाई । समुझि सुसेवक दशरथराई ॥
या बिधि दशरथ कों शिष दैकैं । आये जनक सु ग्रह जस लै कैं ॥
मन्त्री सुमति पुरोहित रानी । लै सुत संग सुदशरथ दानी ॥
चल्यहु अवधि कहँ तहँ मगमाहीं । बोलि खग कटु बानि तहाँहीं ॥
मृग आदिक पशु दहनै आये । भे बूझत नृप कहत कहाये ॥
तब वशिष्ट यह बचन सुनायौ । खग तौ कहत महा भय आयौ ॥
हरिन कहत भय दूर सु ह्वै है । तब लग पवन उठौ बहुतै है ॥
उमड़ि उपटि तरु भू पर छाये । धूरि उड़त नभचर अकुलाये ॥

कम्पति रवि झम्प गयोई । अतिअँधियार अपार क्योई ॥
ोज लख न परत काहू कौं । व्याकुल सकल पवन के झूकौं ॥
प बशिष्ठ नृपसुत शुभ चारी । भे बिह्वल लखि अतिअँधियारी॥
ाही समय तहँहि तचि आये । परशुराम रुष रोषहि छाये ॥
ूडहि मुकट जटन की बाँधे । कठिन कुठार धरहिं निज काँधे॥
ायकसहित सु कर कोदण्डा । प्रलयअगिन सम तेज प्रचण्डा ॥
ति उद्दण्ड अद्भुत क्रुधवन्ता । निजभुजबलक्षत्रियकुलहन्ता ॥
परशराम आवत इमि देखे । करत भये जप सुमुनि असेषे ॥
बोले मुनि आपुस मै येही । आयहु अब यह मारन केही ॥
पितुबध सुमिर कियौ सुन कोप्यौ। फिर चाहत क्षत्रिन कहँ लोप्यौ॥
निहनि क्षत्रकुल पहिलैं याहीं । कीन्हहु त्यहु पन हत हौं नाहीं॥
जानी परत न करत कहा यौ । जो अतिकोपसहित चलिआयौ॥
या कहि अरघ आचमन दीन्हो । सकल मुनिन मिल पूजन कीन्हो

दोहा ।

लैं सनमान मुनीन को परशराम सतरात ।
दशरथसुत श्रीराम सों बोलत भे यह बात ॥

इति श्री बालकांडे चतुःसप्ततितमः सर्गः ॥ ७४ ॥

छन्द ।

सुनहु दशरथतनय राम जु आज कछु हम उच्चरैं ।
आये जो हम तुव सुन पराक्रम अमित अद्भुत हिय धरैं ॥
तोर्यौ जु तुम वह धनुष यातैं दूसरो यह लीजिये ।
मम धनुष याहि चढ़ाइ खैंचहु अब बिलम्ब न कीजिये ॥

दोहा ।

तब तुम्हरो बल समुझि मैं करिहौं तुमसों युद्ध ।
कहत भये यों राम सों परशुराम व्है क्रुद्ध ॥

चौपाई ।

परशुराममुख की जे बातैं । सुनि दशरथ भे विह्वल तातैं ॥
ह्वै अतिदीन नृपति तब कह्यऊ । परशुराम तुम जगजस लह्यऊ ॥
कोपकरब छत्रिन पर तैसो । दीन्हो तुम तजि समुझि अनैसो ॥
इन्द्रहिं सों पुनि पन कर योंही । शस्त्रग्रहन तज दीन्ह्यहु त्योंही ।
समुझि धरम पथ पुन्य कियोई । कश्यप कहँ महि दान दियोई ।
अब तुम क्यों मम पुत्रन तांई । आये नाश करन इहि ठांई ॥
जु तुम राम सों बचन उचारे । करिहौं युद्ध समुझि भुज भारे ॥
मम प्रिय राम जु कहुं दुख पैहैं । तौ हम सब योंही मरिजैहैं ॥
ये सुनि बच दशरथमुखबोले । परशुराम रामहिं सों बोले ॥
सुनहु राम है धनुष महा ये । हैं बिसकरमहि के जु बनाये ॥
तामै इक शङ्करहिं लियोई । जो तुम तोरि दुटूक कियोई ॥
दूजो धनुष जु मम कर माहीं । दीन्ह हुतो बिष्णुहि के तांई ॥
तब सुर धनुषप्रभाव तहांई । भे बूझत ब्रह्मा के तांई ॥
समुझि बिरंच सुरन को गायो । आपुस मे हरि हरहि लरायो ॥
तब हरि करि हुङ्कार अहीनो । शंभु धनुष को थंभन कीन्हो ॥
समुझि सुमतलब देव तहांई । समिति कियहु दोउन के तांई ॥
भे मानत तब सब सुर येहै । शिवधनु तें हरिधनु अधिकैहै ॥
तबहिं सुरनि शिव मारन धाये । सुपरि पगन देवन गुन गाये ॥

न्न शिवधनुष जु बेई । देवरात कहँ आवत भेई ॥
धनुष जो मैं यह ल्यायो । सो रिचीक कहँ सुरन दिवायो ॥
रिचीक निजपुत्रहि दीन्हो । जमदग्निहि जिन अतितपकीन्हो॥
सब शस्त्र करत तप माहीं। ताहि सहस भुज हन्यहु तहांहीं।
व मैं पितुबध-बैर बिचारी । सुमहि निक्षत्र सुबल करि डारी॥
ता पीछैं पुनि यज्ञ कियौई । कश्यप को महिदान दियौई ॥
बहुर महिन्द्राचल के माहीं । करत रह्यो जप तप अब ताहीं॥
तव बिक्रम सुनि तहँ तें आयो। लेहु धनुष निजकरहि महा यो॥

दोहा ।

जु बल होय तौ सरसहित खैंचौ धनुष हमार ।
ता पीछे मैं लरहुँगो तुम सों राजकुमार ॥

इति श्री बालकांडे पंचसप्ततितमः सर्गः ॥ ७५ ॥

छन्द ।

यों परशुराम कहे बचन सुनि रामचन्द्र तहां सबै ।
पितु नृपति दशरथ के डरन मृदु मन्दही बोलि तबै ॥
हे जामदग्नि लियौ जु तुम पितुबैर सो उचितै कियौ ।
हमसें कहत जो लरन अस हम तौ न दुख तुमकौ दियौ ॥

दोहा ।

तेजबिहीनन सों सदा बोल रहे ज्यों आप ।
त्यों हमहूँ सों भाखियतु लै कर हर कौ चाँप ॥

चौपाई ।

या कहि धनुष छुड़ाइ लियौई । पनच चढ़ाइ तयार किय
सर सन्धान सु खैंचत भे ई । बोले तब द्विजबर सों येई
हैं जग बिप्र अवध्य सबै ई । तुम कौशिक-भानैज-तनैई
ते कौशिक मम गुरु हितकारी । तुम समुझत नहिँ रीति हमार
रघुकुलरीत इहहि चलि आई । पूजिहिँ नित मुनिवर समुदाई ॥
हनहिँ न बिप्र न गाइ सतावै । परतिय निरखि न मन ललचावैं॥
पूजनीय तुम हमरे यातैं । ज्यौं हरवानन बाहँहु तातैं ॥
बिष्णुबान यह व्यर्थ न ह्वै है । जापर तजहु सु जियत न रैहै ॥
तातैं जगत भ्रमनही वारे । सर तज काटहु पांउ तुम्हारे ॥
कै बहु पुन्य करि तुम जीते । यों मन होत हनहुँ सब तेते ॥
ताही समय सकल सुर आये । देखन रामप्रभाव सुहाये ॥
परशराम ह्वै तेजबिहीनै । देखत रामबदन दृग दीनै ॥
निकसि तेज रामहि मैं आयौ । परशुराम तब बचन सुनायौ ॥
मैं जब महि कश्यप कौं दीन्हीं । तब उन यह मोसों कहि लीन्हीं॥
तुम न रहहु भृगुपति महिमाहीं। हौं तब तैं निसि बसत न ह्याँहीं॥
मांगि समुद सौं इक गिर लीन्हौ। निजनिवास ताही पर कीन्हौ॥
अबहिँ मनोगत सौं तहँ जैहौं । निसिमहँ मै न मही पर रैहौं॥
सु वह महिन्द्राचल रघुराई । गति बिन तहँ पहुँचब कठिनाई॥
तातैं मम अति गति मति नासौ। ममकृत धर्म जु ताहि बिनासौ ॥
जब लिय छीन धनुष तुम मेरौ । समुझ्यौ तबहिँ प्रभाव घनेरौ॥
हौ तुम तिहुलोकन के स्वामी । मधुसूदन खगपति के गामी ॥
तुम सम युद्ध बिषै नहि कोऊ । देव दनुज राक्षस पुनि सोऊ ॥

ऐसी बचन कहत मुनिस्वामी । है नहिँ लाज गरुड के गामी॥
मै जु पराजय तुम ते पायौ । याकौ दुख न कछुक मोहिआयौ॥
तातैं छोड़हु बान अलैई । छिन्न होंहि मम पुन्य सबैई ॥
पाप नस्यहु लख तुमहिँ बड़ाँई । पुन्य दियहु बानहि के ताई ॥
हौं ऽब करमपासन तें छूव्यौ । तुमहिँ निरखिआनदअतिलूव्यौ
राम तबहिँ सर फेंकत भंई । निरमल भूमि अकास भयेई ॥
साधु साधु कहि देव उचारे । धन्य राम तुम राजदुलारे ॥

दोहा ।

परशुराम निज मनहिँ सों पूजि राम के पाइ ।
बहुरि महेंद्राचल विषें या विधि पहुँचे जाइ ॥

इति श्री बालकांडे षष्टसप्ततितम: सर्ग: ॥ ७६ ॥

छन्द ।

जब परशुराम गये सु रघुबर हरिधनुष बरुनहि दियौ ।
पुनि मुनि बशिष्ठादिकन कौं सुपनाम परि पायन कियौ ॥
जे वचन बोलत भे सु पितु सौं परशुराम गिरै गयौ ।
अब चलहि सैना अवध कौं सुनि नृपति अति हर्षित भयौ ॥

दोहा ।

रामहिं नृपति लगाइ उर सीस सूँघि सुख पाइ ।
सैनि चलाई अवधि कों दुंदुभि दीह दिवाइ ॥

चौपाई।

चलति सैन लखि धूरि उड़ानी। आवत नृप पुरवासिन जानी ॥
तबहिँ अवधपुर के मग जेते। भे छिरकात जलधारन तेते ॥
बरसावत फूलन्ह पुरबासी। बजवावत बाजन सुखरासी ॥
पुरजन नजर करत नजराने। लेत नृपत आये निज थाने ॥
सुतनसहित नृप दशरथराई। भे निजनिज महलन बिच थाई॥
पुत्रबधुन लखि तीनहु रानी। कौशिल्यादिक अति हरषानी॥
नेगचार करि सकल तहाँई। महलन पुत्रबधुन कों ल्याईं ॥
आसुन के परि पाइ सुहाईं। निजनिज भवन सुबहुवें छाईं ॥
नित पितुसेवन चारिहु भाई। करत भये निज मन बच काई॥
इक दिन नृपति भरत सों कह्यऊ। तुव मातुल कृत बहु दिन रह्यऊ॥
आयहु तुमहि लिवावन काजें। जाहु युधाजित सँग छबिछाजें॥
केकयदेश तहाँ तुव नाना। देख्यौ चहत तुमहिँ हरषाना ॥
भरत शत्रुहन तब दुहु भाई। लै पितु की अज्ञा मनभाई ॥
करि प्रनाम मातन पुनि रामै। जात भये नानहि के धामै ॥
केकयनृप लखि दोहित आये। सहित युधाजित अति सुख पाये॥
राम लखन तहँ दोनो भाई। भे दशरथहि अमित सुखदाई ॥
जु कछु पिता निज आइस ठानै। करत काज ताही परिमानै ॥
सीलसहित लखि राम सुभावै। कोऊ कहुं न प्रजा दुख पावै ॥
या बिधि राम नृपति-सुत नीके। करत भये कारज सबही के ॥
सीयसहित यों बहु दिन ताईं। कीन्हों सुख रघुबीर तहाँईं ॥
रामहृदै सीता छबि छाई। सीताहृदैं राम रघुराई ॥

दोहा ।

प्रीति परस्पर दुहुन की सकै कौन अनुरूप ।
लक्ष्मीनारायन मनौ आनँद करत अनूप ॥

इति श्री बालकांडे सप्त सप्ततितमः सर्गः ॥ ७७ ॥

योहित्वा निजलोकमब्जजगिरा धृत्वा चतुर्धं वपु-
र्भ्राजत्पंक्तिरथाख्यभूपभवने संभूय भीत्या रिपून् ।
कृत्वा कौशिकयज्ञरक्षणमहो हृत्वा विदेहात्मजां
साकेतं पुनरागतः सुभगवान् रामोभिरामो भवः ॥

सिद्ध श्री मथुरास्थमोहनलालभट्टात्मजकविपद्माकरबिरचिते

॥ रामरसायने बालकाण्डः समाप्तः ॥

National Library,
Calcutta-27.

DBA000005655HIN